जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
School of Language, Literature & Culture Studies
NEW DELHI- 110067

Centre of Indian Languages Date: 28/07/2008

DECLARATION

I declare, that the work done in this dissertation entitled **"ATMKATHA KI PARAMPARA AUR 'SINGHAVALOKAN'(TRADITION OF AUTOBIOGRAPHY AND 'SINGHAVALOKAN')"** by me is an original work and has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/Institution.

Maya Singh
KUMARI MAYA
(Research Scholar)

DR. OM PRAKASH SINGH
SUPERVISOR
CIL/SLL&CS
JNU

PROF. CHAMAN LAL 28/7/08
CHAIRPERSON
CIL/SLL&CS
JNU

एम.फिल. उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबंध

"'आत्मकथा' की परम्परा और 'सिंहावलोकन'"

शोध–निर्देशक
डॉ. ओमप्रकाश सिंह

शोधार्थी
कुमारी माया

भारतीय भाषा केंद्र
भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली–110067

2008

अपनी ममता की छाया में रखने वाली तथा
अध्ययन एवं मनन की ओर प्रेरित करने वाली
माँ को समर्पित

अनुक्रमणिका

पृ. संख्या

भूमिका

प्रथम अध्याय 1 – 23

आत्मकथा : स्वरूप और परम्परा

(क) आत्मकथा क्या है

(ख) आत्मकथा का स्वरूप

(ग) आत्मकथा के तत्व

(घ) आत्मकथा की परम्परा

द्वितीय अध्याय 24 – 51

'सिंहावलोकन' और जीवन की सम्बद्धता

(क) 'सिंहावलोकन' का कथ्य–विस्तार

(ख) यशपाल का शेष जीवन

(ग) यशपाल के जीवन और चिन्तन में स्वाधीनता एवं क्रांतिकारी दल

तृतीय अध्याय 52 – 80

आत्मकथा कथा के निकष पर 'सिंहावलोकन' का मूल्यांकन

(क) स्व की अभिव्यक्ति

(ख) स्मृति

(ग) घटनाओं का चयन

(घ) क्रमबद्धता

(ड़) स्पष्टता

(च) व्यक्तित्व का चित्रण
(छ) देशकाल वातावारण
(ज) भाषा शैली
(झ) उद्देश्य

उपसंहार 81 – 87

संदर्भ ग्रंथ सूची 88 – 90

परिशिष्ट 91

भूमिका

'आत्मकथा' लेखक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के निष्पक्ष उद्‌घाटन की विधा है। इसमें लेखक अपने जीवन की सबलता तथा दुर्बलता, सफलता तथा असफलता आदि का संतुलित एवं व्यवस्थित चित्रण करता है। वह अपने जीवन–बोध को तटस्थता, निष्पक्षता तथा निर्भीकता से उभरता है। आत्मकथा गद्य का वह रूप है जिसमें लेखक के 'स्व' का विवेचन एवं विश्लेषण होता है। इसके साथ ही तत्कालीन युग परिवेश अपने पूरे प्रभाव के साथ रचना में सक्रिय रहता है। यह अवश्यक है कि लेखक देशकाल वातावरण का विवेचन वहीं तक करता है जहां तक ये उसके व्यक्तित्व को उभारते हैं।

'आत्मकथा' मानव जीवन का सप्रमाण प्रतिबिम्ब है। दिन–प्रतिदिन नये–नये साहित्यकार आत्मकथा जगत में अवतरित होकर अपनी अनुभूतियों को साहित्य में अभिव्यक्त करने की चेष्टा कर रहे हैं। इनमें से कुछ आत्मकथायें तो साहित्य की स्थायी निधि बन जाती हैं और कुछ समय के प्रवाह में विलीन हो जाती हैं।

यशपाल साहित्यिक जगत के प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं, इनका आरम्भिक जीवन क्रांतिकारी के रूप में तथा क्रांतिकारियों के साथ बीता है। इनकी आत्मकथा 'सिंहावलोकन' साहित्य की एक अमूल्य निधि है। यह तीन भागों में विभाजित है और इसे यशपाल की सशस्त्र क्रांति की कहानी के रूप में जाना जाता है। इसमें उनके जन्म से लेकर जेल से मुक्त होने तक की गतिविधियों का लेखा–जोखा संस्मरण के रूप में मिलता है।

'सिंहावलोकन' यशपाल और उनके साथियों के क्रांतिकारी जीवन का रोचक इतिहास है। इसमें तत्कालीन युग परिवेश का यथार्थ चित्रण भी हुआ है। इतने बड़े क्रांतिकारी होकर भी यशपाल को उतनी प्रसिद्धि न मिली जितनी कि भगत सिंह, सुखदेव आदि को मिली। यह सही है कि क्रांतिकारी रूप की तुलना में यशपाल का साहित्यिक व्यक्तित्व अधिक प्रसिद्ध है लेकिन उनके क्रांतिकारी रूप का ही प्रतिफलन साहित्यिक रूप है। यशपाल का क्रांतिकार्य महान है जो सदियों तक युवा पीढ़ी को प्रकाश देता रहेगा। कमलेश्वर ने यशपाल को राष्ट्रीय क्रांति के आन्दोलन से निकला एक लेखक बताया है। यशपाल आजीवन क्रांतिकारी रहे। आरम्भ में जो कार्य पिस्तौल से करते थे साहित्यिक जीवन में वही कार्य कलम से करने लगे। देश, समाज, जनता ही उनकी चिन्ता के प्रमुख विषय रहे। यशपाल के साहित्यिक व्यक्तित्व को हम तभी समझ सकते हैं जब हम उनके क्रांतिकारी व्यक्तित्व को समझ लें, क्योंकि उनके क्रांतिकारी व्यक्तित्व ने ही उनके साहित्यिक तथा सामाजिक व्यक्तित्व को निखारा है। अतः यशपाल के क्रांतिकारी व्यक्तित्व से साहित्यिक व्यक्तित्व को अलग करके देखना उचित नहीं है।

आर्यसमाजी, कांग्रेसी और फिर क्रांतिकारी यही वह सीढ़ियां हैं जिनसे होकर यशपाल क्रांतिकारी बने। ये जिस क्रांतिकारी संगठन के सदस्य रहे उसका लक्ष्य मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त था। यशपाल का लक्ष्य भी यही रहा। वे गद्य साहित्य की अनेक विधाओं में लेखन करते हुए अपने लक्ष्य पर अग्रसर रहे। मैनेजर पाण्डेय ने इनकी तुलना प्रेमचन्द से करते हुए लिखा है –

"प्रेमचन्द की तरह यशपाल भी यह समझते थे कि भारतीय जनता की आजादी की लड़ाई केवल अंग्रेजी राज से स्वतन्त्रता तक सीमित नहीं है। इसका लक्ष्य साम्राज्यवाद के साथ–साथ भारतीय समाज में मौजूद सामंती तत्वों, मूल्यों और प्रवृत्तियों के प्रभावों से मुक्ति भी है और नए उभरते पूंजीवाद के शोषण तथा दमन से छुटकारा भी।"[1]

'सिंहावलोकन' में यशपाल की जीवन कथा जीवन्त बन गई है। इसमें लेखक का जो व्यक्तित्व प्रकट होता है वह प्रखर क्रांतिकारी देशभक्त और चिन्तक का है। इसमें यशपाल के क्रांतिकारी जीवन तक की घटनाओं का ही चित्रण हुआ है। साहित्यकार जीवन में उन्हें किन–किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जेल से छूटने के बाद उन्हें क्या करना पड़ा, उन सबकी जानकारी इस आत्मकथा में नहीं मिलती। उनके मन में अंग्रेजों के प्रति घृणा कैसे उत्पन्न हुई तथा उन्होंने अपना दाखिला सरकारी स्कूल में न कराकर नेशनल कॉलेज में क्यों कराया ? जबकि वह जानते थे कि इसमें कोई छात्रवृत्ति नहीं मिलेगी और न ही सरकारी नौकरी की आशा की जा सकती है। इसका उल्लेख 'सिंहावलोकन' में मिलता है। वे स्वाधीनता आंदोलन में अपना सहयोग किस प्रकार देते रहे इसका प्रामाणिक चित्र प्रस्तुत किया है।

यशपाल की आत्मकथा 'सिंहावलोकन' पर अपने अध्ययन को प्रस्तुत करने के लिए हमने इस लघु शोध–प्रबन्ध को तीन अध्यायों में विभाजित किया है प्रथम अध्याय 'आत्मकथा : स्वरूप और परम्परा' है। इस अध्याय में आत्मकथा क्या है, आत्मकथा का स्वरूप, आत्मकथा के तत्व तथा आत्मकथा की परम्परा के सम्बन्ध में लेखा–जोखा प्रस्तुत किया गया है। इसी अध्याय में इसका भी उल्लेख किया गया है कि आत्मकथा का साहित्य की अन्य गद्य विधाओं से क्या विभेद है ? इस अध्याय में मूलतः आत्मकथा के सैद्धान्तिक पक्ष को उद्घाटित किया गया है।

द्वितीय अध्याय का शीर्षक है – 'सिंहावलोकन' और जीवन की आपसी सम्बद्धता'। इसमें 'सिंहावलोकन' के कथ्य विस्तार का, यशपाल के शेष जीवन का जिसका उल्लेख 'सिंहावलोकन' में नहीं हुआ है उसका उल्लेख किया गया है तथा यशपाल के जीवन और चिन्तन में स्वाधीनता और क्रांतिकारी दल की स्थिति पर विचार किया गया है।

1. भारतीय लेखक, यशपाल विशेषांक : 2004, सं. भीमसेन त्यागी, पृ. 115

तृतीय अध्याय में आत्मकथा के निकष पर 'सिंहावलोकन' का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय में इस बात पर विचार किया गया है कि क्या 'सिंहावलोकन' आत्मकथा के निकष पर खरा उतरता है ? और यदि खरा उतरता है तो किस प्रकार और कहाँ और यदि खरा नहीं उतरता है तो कहाँ और क्यों नहीं उतरता। आत्मकथा में जो तत्व अनिवार्य होते हैं जिनके आधार पर आत्मकथा का स्वरूप निर्धारित किया जाता है, वह 'सिंहावलोकन' में कहाँ पर विद्यमान है इसका मूल्यांकन किया गया है।

अन्त में उपसंहार शीर्षक से लघु शोध का सार संक्षेप प्रस्तुत किया गया है। यह लघु शोध–प्रबन्ध श्रद्धेय गुरुवर डॉ. ओमप्रकाश सिंह के कुशल निर्देशन में पूर्ण हुआ है। विषय के चयन से लेकर शोध की समाप्ति तक समय–समय पर उनसे प्रेरणा, प्रोत्साहन, दिशा–निर्देशन तथा आशीर्वाद मिलता रहा। प्रस्तुत विषय पर शोध कार्य के दौरान उठी गुत्थियों पर अध्ययन–मनन, बहुमूल्य विचार–विमर्श एवं परामर्श का जो लाभ मुझे मिला तथा भावात्मक एवं वैचारिक दोनो रूप से जिन्होंने मेरी मदद की उस अपने गुरुवर के प्रति मैं आजीवन आभारी हूँ।

अपने इस प्रयास में मैं कहाँ तक सफल हुई हूँ इसका तो मुझे ज्ञान नहीं किंतु इतना अवश्य कहूंगी कि यह कार्य माँ की ममता तथा आशीर्वाद से ही सम्भव हो सका है। इसलिए यह उन्हीं को समर्पित है।

लघु शोध कार्य को पूरा करने के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य था –सामग्री संकलन। इस कार्य में हमें जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, दिल्ली विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, साहित्य अकादमी लाइब्रेरी आदि से बहुत मदद मिली। मैं यहाँ के कर्मचारियों के प्रति आभारी हूँ।

इसके अतिरिक्त अपने अग्रज, बहनों तथा मित्रों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मुझे हमेशा प्रोत्साहित किया तथा अपने सुझावों से इस लघु शोध को सम्भावित त्रुटियों से बचाया।

प्रथम – अध्याय

आत्मकथा : स्वरूप और परम्परा

(क) आत्मकथा क्या है

(ख) आत्मकथा का स्वरूप

(ग) आत्मकथा के तत्व

(घ) आत्मकथा की परम्परा

(क) आत्मकथा क्या है

हिन्दी गद्य आधुनिक काल की उपज हैं इस काल में गद्य का अभूतपूर्व विकास हुआ है। आज गद्य की अनेक विधाएं कविता की तुलना में अधिक लोकप्रिय है। यद्यपि गद्य की सभी विधाओं का प्रादुर्भाव लगभग एक साथ हुआ, परन्तु उपन्यास, कहानी आदि कुछ विधाएं आत्मकथा की तुलना में काफी पहले प्रौढ़ एवं सशक्त हो गईं। कुछ विद्वान आत्मकथा को स्वतंत्र विधा न मानकर जीवनी, संस्मरण, डायरी आदि विधाओं में उसे परिगणित कर देते हैं। यह ठीक नहीं। इन लोगों की ऐसी धारणा इसलिए बनी कि आधुनिक काल के आरम्भ में आत्मकथा कम लिखी गयी हैं। यह एक ऐसी विधा है जिसमें लिखना तलवार की धार पर चलने जैसा है। जरा भी फिसले या लड़खड़ाये कि गये। कहीं अपने आपको बढ़ा–चढ़ाकर व्यक्त करने का डर तो कहीं सचाई सामने आने पर इष्ट मित्रों के नाराज होने का डर। हिन्दी के अनेक लेखकों ने अपने आपको दोनों तरह के जोखिम में डालकर आत्मकथा लेखन किया है। लोग 'सांच को आंच' को बर्दाश्त नहीं कर सकते, इस बात को बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'अपनी खबर' में इस प्रकार लिखा है –

"बहुतों के बारे में सत्य प्रकट हो जाये तो उनके यश और जीवन का चिराग ही लुप–लुप करने लगे। कुछ तो मरने–मारने पर भी आमादा हो सकते हैं।"[1]

समय परिवर्तन के साथ आज आत्मकथा विधा ने भी अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया है। आत्मकथा लेखन का जायजा लेते हुए 'विजयेन्द्र स्नातक' ने लिखा है –

"मानवीय व्यक्तित्व एवं संघर्षों की ओर रचनाकारों की रुचि बढ़ रही है, और जीवनी एवं आत्मकथा लेखन की ओर ज्यादातर रचनाकारों का झुकाव दिखाई देता है।"[2]

'आत्मकथा' शब्द अंग्रेजी के Autobiography का हिन्दी पर्याय है। इसके लिए आत्मकथा, आत्मवृत्त, आत्मचरित, स्वकथा, आत्मजीवनी, आपबीती आदि कई शब्द प्रचलित हैं। किन्तु इसमें सबसे उपयुक्त शब्द आत्मकथा ही है। संस्कृत में आत्मकथा के लिए 'आत्मवृत्त कथनम्' और आत्मचरितम् शब्द मिलते हैं। विलियम टेलर ने आत्मकथा के लिए दो शब्द दिया है –

Self Biography तथा Autobiography

'इनसाइक्लोपिडिया ब्रिटेनिका' में आत्मकथा के बारे में लिखा हुआ है –

"आत्मकथा सामान्यरूप से किसी व्यक्ति द्वारा लिखित स्वयं के जीवन–चरित के लिए प्रयुक्त होता है, उसके अनेक उद्देश्यों में आत्म–निरीक्षण, आत्मज्ञान और आत्मन्याय है।"[3]

'इनसाइक्लोपिडिया अमेरिका' में आत्मकथा को इन शब्दों में परिभाषित किया गया है –

"The life of indvisdual Narrated by himself, in its Broadest meaning the term indudes memories, Journals diaries and letters."

'हिन्दी साहित्य कोश' में बीते हुए जीवन के सिंहावलोकन को आत्मकथा का मूल तत्व माना गया है –

"आत्मकथा लेखक के अपने जीवन का सम्बद्ध वर्णन है। आत्मकथा के द्वारा अपने बीते हुए जीवन का सिंहावलोकन और एक व्यापक पृष्ठभूमि में अपने जीवन का महत्व दिखलाया जाना सम्भव है।"[5]

आत्मकथा में जीये हुए जीवन का तथा झेले हुए सुख–दुख का लेखा–जोखा लेखक अपने सम्पूर्ण जीवन के पुनर्निरीक्षण के रूप में प्रस्तुत करता है। 'बैजनाथ सिंहल' ने आत्मकथा के विषय में लिखा है –

"आत्मकथा' में कथा का विशेषण आत्म है। इस प्रकार इसका अर्थ हुआ है कि व्यक्ति के द्वारा स्वयं अपनी कथा का लेखन। यह आत्म न तो गीतिकार का क्षणिक घनीभूत 'आत्म' है और न ही निबन्धकार का किसी विषय के प्रतिक्रियात्मक 'आत्मा'। बल्कि; इस आत्म में सम्बद्ध व्यक्ति का जन्म से लेकर अपनी कथा लिखने तक का वह 'आत्म' रहता है जिसमें उसकी पूरी जीवन–यात्रा समाई हुई है।"[6]

आत्मकथा को 'एक विशिष्ट परिवेश' के माध्यम से जिये गये विशिष्ट क्षणों का पुनः सृजन कहा जा सकता है। इसका सम्बन्ध मात्र बीते हुए क्षणों के पुनः सृजन से ही नहीं है बल्कि युग परिवेश, तत्कालीन वातावरण से भी है। 'नगेन्द्र' ने आत्मकथा को अतीत और वर्तमान दोनों से जोड़ा है –

"आत्मकथाकार अपने सम्बन्ध में किसी मिथक की रचना नहीं करता, कोई स्वप्न सृष्टि नहीं रचता वरन अपने गत जीवन के खट्टे–मीठे, अजले–अंधेरे, प्रसन्न विषण्ण, साधारण–असाधारण संचरण पर मुड़कर एक दृष्टि डालता है। अतीत को पुनः कुछ क्षणों के लिए स्मृति में जी लेता है और अपने वर्तमान तथा अतीत के मध्य संबंध सूत्रों का अन्वेषण करता है।"[7]

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने आत्मकथा को जीवन के रहस्यों का उद्‌घाटक कहा है –

"आत्मकथा वस्तुतः रहस्य के प्रकाशन के लिए लिखी जाती है। ... व्यक्ति का जो स्वरूप सामान्यतया, साधारणतया समाज के सामने नहीं आता उसे लाना ही आत्मकथा का प्रयोजन है। ... इस प्रकार रहस्यात्मक असाधारण का ही प्रकाशन आत्मकथा का लक्षण प्रतीत होता है।"[8]

आत्मकथा उसे कह सकते हैं जिसमें तथ्यात्मक सत्य तथा लेखक का अनुभवगत सत्य दोनों विद्यमान रहते हैं। 'प्रेमचन्द' ने आत्मकथा में आत्मानुभव पर विशेष जोर दिया है। उनके अनुसार – "केवल आत्मानुभव लिखे जावे, उसमें कल्पना का लेश भी न हो।"[9]

'मैनेजर पाण्डेय' "पूरा सच बोलना आत्मकथा की नैतिक और सौन्दर्यबोधी शर्त"[10] मानते हैं। आत्मकथा के संबंध में 'अमृता प्रीतम' ने लिखा है –

"आत्मकथा यथार्थ से यथार्थ तक पहुंचने की प्रक्रिया है।"[11]

आत्मकथा में अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए आत्मालोचन की सख्त जरूरत होती है। 'बेचन शर्मा उग्र' मानते हैं –

"अपनी याददाश्त पब्लिक की जानकारी के लिए लिखने में आत्मप्रशंसा और अहंकार–प्रदर्शन का बड़ा खतरा रहता है। ऐसे संस्मरणों से किसी एक मन्द घटना के कारण अनेक गुण सम्पन्न पुरुष पर अनावश्यक आंच भी आ सकती है।"[12]

आत्मकथा के सम्बन्ध में इस बात को सभी विद्वानों ने माना है कि इसका आधार 'स्व' हैं आत्मकथा एक जीवनीपरक विधा है। यह जीवनी स्वयं लेखक की होती है और लेखक द्वारा लिखी जाती है। आत्मकथा को लेखक की कहानी लेखक की जुबानी कहा जा सकता हैं इसमें लेखक अपने जीवन की बीती हुई घटनाओं के साथ–साथ बाह्य विश्व से सम्बद्ध मानसिक क्रिया–प्रतिक्रिया की कलात्मक अभिव्यक्ति करता है। आत्मकथाकार 'स्व' के अंकन से आत्मपरिष्कार, आत्मआलोचना तथा आत्मोन्नति करना चाहता है। साथ ही साथ वह अपने अनुभवों को दूसरों तक पहुंचाना चाहता है जिससे दूसरे लोग लाभ उठा सकें। जब लेखक अपने अतीत के घटनाओं, प्रसंगों, विचारों तथा अनुभवों आदि को ईमानदारी से प्रस्तुत करता है तब वह आत्मकथा अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

(ख) आत्मकथा का स्वरूप

'आत्मकथा' गद्य साहित्य की एक आत्मनिष्ठ विधा है। आत्मनिष्ठ इस अर्थ में कि आत्मकथा लेखक–मन की निजी अनुभूतियों एवं संवेदनाओं का सर्जन करता है। आत्मकथा के अन्तर्गत लेखक वैयक्तिक जीवन अथवा वैयक्तिक सम्पर्क में आये हुए अन्य व्यक्तियों के जीवन के विस्तृत कालखण्ड की स्मृतियों को अंकित करता है। यशपाल ने

अपनी आत्मकथा 'सिंहावलोकन' में भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि के जीवन की स्मृतियों को चित्रित किया है। आत्मकथा लेखक कई अर्थों में इतिहास के लिए बहुमूल्य सामग्री प्रस्तुत करता है लेकिन आत्मकथा लेखक इतिहासकार नहीं होता। आत्मकथा इतिहास की वस्तुपरक भंगिमा से दूर साहित्य की भावानुभूतिपरक विधा है। 'राजपाल' के अनुसार –

"आत्मकथा स्वयं लिखी जाने वाली जीवनी है। यह 'स्व' के जीवन की स्वरचित कथा मानी जा सकती है।"[13]

आत्मकथा लेखक उम्र के एक खास मोड़ पर पहुँचकर अपने अतीत के अनुभवों को दूसरों के सामने रखना चाहता है जिससे उसके अनुभवों से दूसरे लोग लाभ उठायें। बुरे कार्यों का पश्चाताप करने के लिए तथा अपने अनुभवों से उत्पन्न तनावों से मुक्त होने के लिए भी आत्मकथा लिखी जाती है। 'हरिवंश राय बच्चन' ने अपनी आत्मकथा की भूमिका में लिखा है –

"मुझे कई वर्षों से लग रहा था कि जब तक मैं अपने अन्तर में उठती स्मृतियों को चित्रित न कर डालूंगा तब तक मेरा मन शान्त नहीं होगा ... मेरे जिन अभिव्यक्तियों से आपके मन को भी यत्किंचित शान्ति मिलती रही है। मैं उन्हें अपने मन को शान्ति देने के लिए ही प्रस्तुत करता रहा हूँ।"[14]

आत्मकथा लिखना कठिन काम है क्योंकि अपने चरित्र को उद्‌घाटित करना, स्वयं का निरीक्षण, परीक्षण तथा आत्मालोचना करना व्यक्ति के लिए सहज नहीं है। दूसरों के विषय में कुछ भी कहना आसान होता है जबकि अपने विषय में कुछ कहना कठिन चाहे गुण हो या दोष। इस संदर्भ में 'ओमप्रकाश सिंहल' ने लिखा है –

"अपने चरित्र का विश्लेषण करना सरल नहीं है क्योंकि यदि लेखक अपने गुणों का वर्णन करता है तो आत्मप्रशंसक कहलाता है। यदि दोषों का उल्लेख करता है तो यह भय बना रहता है कि कहीं श्रद्धालु जनों की श्रद्धा ही न समाप्त हो जाये और यदि वह दोषों का उल्लेख नहीं करता तो सच्चा आत्मकथा लेखक होने का अधिकारी नहीं है।"[15]

इसीलिए आत्मकथा की संख्या शायद अन्य विधाओं की पुस्तकों से कम है। आत्मकथा में लेखक की अपनी कहानी होती है। इसमें कल्पना की गुंजाइश नहीं होती। लेखक अपनी भावनाओं और घटनाओं को किसी पात्र पर प्रक्षेपित न कर स्वयं के माध्यम से सामने लाता है। आत्मकथा के स्वरूप के सम्बन्ध में कह सकते हैं कि आत्मकथा कलात्मक ढंग से लिखी गई स्वयं लेखक की जीवनी है। इसमें लेखक अपने जीवन की बीती हुई घटनाओं का क्रमबद्ध चित्रण कर उसे सहजता प्रदान करता है। इसमें अतीत

के जीवन के चित्रण के साथ–साथ उसके पूरे परिवेश का चित्रण होता है। लेखक स्वयं विषय भी है और विषय को अभिव्यक्त करने वाला भी। आत्मकथाकार 'स्व' के साथ बाह्य वातावरण एवं सम्पर्क में आने वाले अन्य व्यक्तियों का भी चित्रण करता है। ऐसी दशा में वह उनके व्यक्तित्व को उभारता भी है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में उस युग की राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण किया है। उन्होंने स्वतंत्रता सेनानियों के त्याग, बलिदान, राष्ट्रप्रेम तथा धैर्य आदि का चित्र खींचा है। भगत सिंह के विषय में उन्होंने लिखा है –

"भगत सिंह असहयोगी विद्यार्थियों में से था। राष्ट्र की पुकार पर उसने शायद नवीं कक्षा से स्कूल छोड़ दिया था और वह कांग्रेस के स्वयं सेवकों में भर्ती होकर राष्ट्रीय काम करने लगा।"[16]

आत्मकथा सत्य के जितनी निकट होती है उतनी साहित्य की कोई अन्य विधा नहीं होती। 'कैलाशचन्द्र भाटिया' ने आत्मकथा के स्वरूप के सम्बन्ध में लिखा है –

"आत्मकथा में लेखक अपने बीते हुए जीवन का सिंहावलोकन करता है। यथार्थपरकता इसका प्रधान लक्षण है जहाँ अपने अतीत और वर्तमान को झांकता है वहीं अपने परिवेश से पूरी तरह जुड़ा होता है।"[17]

'नन्ददुलारे वाजपेयी' ने आत्मकथा लिखने तथा हंस के 'आत्मकथांक' का विरोध किया था। उनका मानना है कि आत्मकथा में आत्मविज्ञापन होता है तथा आत्मकथाकार लेखक के लिए चरित्रवान होना आवश्यक है –

"ऐसे व्यक्ति जो आत्मकथा लिखने के योग्य हों हिन्दी संसार में अधिक नहीं, उंगलियों पर ही गिने जा सकते हैं।"[18]

प्रेमचन्द ने नन्ददुलारे वाजपेयी का विरोध करते हुए आत्मकथा के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त किया था –

"आत्मकथा का आशय है कि केवल आत्म–अनुभव लिखे जावें, उसमें कल्पना का लेश भी न हो। बड़े–बड़े लोगों के अनुभव बड़े–बड़े होते हैं; लेकिन जीवन में ऐसे कितने ही अक्सर आते हैं; जब छोटे के अनुभव से हमारा कल्याण होता है। सुई की जगह तलवार काम नहीं दे सकती।"[19] इन्होंने आगे लिखा है कि –

"एक आदमी अपने जीवन के तत्व आपके सामने रखता है, अपनी आत्मा के संशय और संघर्ष लिखता है, आपसे अपनी बीती कहकर अपने चित्त को शान्त करना चाहता है; आपसे अपील करके अपने उद्योगों के औचित्य पर राय लेना चाहता है और आप कहते

हैं, यह वाणी का विलास है। वाणी–विलास आत्मकथा लिखना नहीं।"[20]

आत्मकथा का प्रत्येक सन्दर्भ एक दूसरे से सुसम्बद्ध होते हैं। इसका स्वरूप स्मृतियों पर आधारित होता है। लेखक अपने उद्देश्य एवं व्यक्तित्व के अनुसार अपनी स्मृतियों को क्रम देता है। बहुत सी स्मृतियों को छोड़ भी देता हैं जो स्मृति उसके जीवन के विकास में सहयोग देती है उन्हीं का चयन करता है। लेखक निष्पक्ष होकर आत्मोद्घाटन करता है। आत्मकथा में यह नहीं है कि वह अपने जीवन के उज्ज्वल पक्ष को व्यक्त करता है और दुर्बल पक्ष को छिपाता है बल्कि अपने चरित्र के गुण दोषों का सम्यक निरूपण करता है। फिर भी कभी–कभी आत्मकथाकार तटस्थ होकर भी आत्ममोह से मुक्त नहीं हो पाता। 'दिनकर' ने अपनी डायरी 'दिनकर की डायरी' की भूमिका में लिखा है कि –

"डायरी हो या आत्ककथा, आदमी अपने सही रूप को उस तरह आंक नहीं सकता जिस तरह उसे कोई तटस्थ व्यक्ति आंक सकता है। जीवन में हम बहुत से काम गलत करते हैं लेकिन इसका ध्यान हमें बराबर रहता है कि वे गलतियां हमारे लेखों में न आ जाये।"[21]

आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, डायरी आदि विधाएं एक दूसरे से संबंद्ध होती है। अगर इसमें अन्तर है तो बहुत कम है। यहाँ तक कि आत्मकथा में लेखक इन विधाओं का आश्रय भी लेता है। 'बेचन शर्मा उग्र' ने अपनी आत्मकथा 'अपनी खबर' में डायरी शैली का प्रयोग किया है। 'बाबूलाल गोस्वामी' का इस सम्बन्ध में मत व्यक्त किया है कि –

"शिल्प की दृष्टि से इसमें पत्र, डायरी, संस्मरण आदि सबका सम्मिलित रूप मिलता है। ये प्रेरणा की अक्षय स्रोत है तथा पढने में उपन्यास का सा आनन्द देती है।"[22]

फिर भी आत्मकथा का स्वरूप अन्य गद्य विधाओं से भिन्न है। यह अपने आपमें एक स्वतंत्र विधा है। आत्मकथा से अन्य विधाओं के अन्तर को बताकर आत्मकथा से अन्य विधाओं को बताकर आत्मकथा के स्वरूप का निर्धारण अधिक स्पष्ट रूप से किया जा सकता है –

आत्मकथा तथा जीवनी

आत्मकथा और जीवनी दोनों ही व्यक्तिगत जीवन की कहानी होती हैं। अन्तर यह है कि आत्मकथा में लेखक स्वयं अपनी कहानी कहता है जबकि जीवनी में लेखक किसी दूसरे की कहानी। आत्मकथा लेखक के जीवनकाल में लिखी जाने वाली विधा ह। जीवनी नायक के जीवनकाल के बाद भी लिखी जा सकती है। जीवनी लेखक अपने अनुमान के आधार पर किसी दूसरे व्यक्ति के अनुभवों को व्यक्त करता है। इसमें अनुभवगत सत्य तो होता है पर पूर्ण सत्य नहीं। आत्मकथा लेखक स्वयं के भोगे हुए जीवन को पुनः सृजित

करता है इसलिए यह सत्य के अधिक करीब होता है। इसमें लेखक स्मृति के आधार पर 'स्व' को व्यक्त करता है। आत्मकथा की घटनाएं श्रृंखलाबद्ध होती है। जीवनी के साथ ऐसा नहीं है कि वह श्रृंखलाबद्ध ही हो। अतः आत्मकथा में लेखक वर्तमान बोध के आलोक में अतीत बोध को व्यक्त करता है। लेखक स्मृतियों के आधार पर व्यक्तित्व के विकास को चित्रित करता है तथा 'स्व' की अभिव्यक्ति पूरी सच्चाई के साथ करता है।

आत्मकथा तथा डायरी

आत्मकथा और डायरी दोनों विधाएं लेखक के 'स्व' की प्रकटीकरण से जुड़ी होती है। फिर भी दोनों में कुछ अन्तर है। आत्मकथा में लेखक विगत जीवन को स्मृतियों के आधार पर पुनः सृजित करता है जबकि डायरी लेखन समय के साथ–साथ चलता रहता है। डायरी में दैनिक जीवन के घटनाओं, भावों, विचारों का चित्रण होता है तथा इसमें प्रत्येक घटना का समय, स्थान, तिथि आदि का विवरण प्रस्तुत रहता है। इसलिए इसमें विश्वसनीयता अधिक रहती है। आत्मकथा में ऐसा नहीं है। आत्मकथा में लेखक घटनाओं को काँट–छाँटकर प्रस्तुत करता है तथा उन्हीं घटनाओं को प्रस्तुत करता है जिसका प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है। आत्मकथा डायरी की अपेक्षा अधिक सम्प्रेषणीय एवं प्रभावशाली होती है।

आत्मकथा तथा संस्मरण

आत्मकथा और संस्मरण दोनों विधाएं आत्मपरक होती है तथा दोनों में विगत जीवन की स्मृतियों का चित्रण होता है। परन्तु ये दोनों साहित्य की दो अलग–अलग विधाएं हैं। संस्मरण में लेखक अपनी स्मृतियों में से कुछ महत्वपूर्ण स्मृतियों या घटनाओं को ही व्यक्त करता है जबकि आत्मकथा में लेखक अपने बीते हुए जीवन की लगभग सभी घटनाओं को व्यक्त करता है। 'डा. चन्द्रावती सिंह' ने संस्मरण के संबंध में लिखा है –

"जीवनी की बहुत सी बातों में, संसार की हलचलों में, दफ्तर की किसी कार्यवाही में या किसी सभा में जो समय–समय पर बाते घटी हैं उनका अलग–अलग वर्णन संस्मरण कहा जा सकता है। इसमें आत्मचरित की एकता नहीं हो सकती।"[23]

आत्मकथा 'स्व' पर ही केन्द्रीत होती है जबकि संस्मरण का सम्बन्ध दूसरों से अधिक रहता है क्योंकि लेखक जो संस्मरण प्रस्तुत करता है जरूरी नहीं कि वह लेखक का ही हो, दूसरे का भी हो सकता है।

आत्मकथा और रिपोर्ताज

आत्मकथा तथा रिपोर्ताज परस्पर सम्बन्धित होते हुए भी दोनों एक दूसरे से स्वतंत्र हैं। 'आत्मकथा' लेखक के अपने जीवन का तटस्थ रहकर किया गया आत्मपरीक्षण है।

'रिपोर्ताज' लेखक के लिए आवश्यक है कि वह घटना का विवरण तटस्थ भाव से प्रस्तुत करे। आत्मकथा और रिपोर्ताज में अन्तर यह है कि आत्मकथा का नायक खुद लेखक होता है और पूरी कथा इसी के इर्द–गिर्द घूमती रहती है जबकि रिपोर्ताज में ऐसा नहीं है। इसमें लेखक की अनुभूति घटना सापेक्ष होती है और इसके केंद्र में घटना को रखा जाता है। आत्मकथाकार अपनी अनुभूतियों को तुरन्त नहीं लिखता। इसके विपरीत रिपोर्ताज–लेखक अपने अनुभूतियों को तुरन्त व्यक्त करता है। आत्मकथा में कई वर्षों का चित्रण होता है वहीं रिपोर्ताज में कुछ घटनाओं का।

आत्मकथा का गद्य की अन्यविधाओं से अन्तर दिखाकर यहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि आत्मकथा गद्य की अन्य विधाओं से सम्बद्ध होते हुए भी साहित्य की एक स्वतंत्र विधा है। इसका स्वरूप अन्य विधाओं से भिन्न है। संक्षप में आत्मकथा का स्वरूप इस प्रकार होता है –

1. 'आत्मकथा' लेखक के आत्म की कथा है।
2. आत्मकथा लेखक के बीते हुए जीवन का सिंहवालोकन है।
3. आत्मकथा में लेखक स्वयं के जीये हुए जीवन को पुनः सृजित करता है।
4. आत्मकथा में वर्णित घटनाएं एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं होती वरन एक दूसरे से श्रृंखलाबद्ध होती हैं।
5. आत्मकथा साहित्य की स्वतंत्र विधा है। इसके लेखन में गद्य की अन्य नवीन विधाओं का आश्रय लिया जा सकता है।
6. आत्मकथा का पात्र वास्तविक होता है।
7. आत्मकथाकार 'स्व' के साथ अन्य व्यक्ति तथा तत्कालीन परिवेश को भी चित्रित करता है परन्तु इसका चित्रण वह तभी करता है जब इसमें उसका व्यक्तित्व निखरता है।
8. आत्मकथा में अतीत के साथ वर्तमान का भी चित्रण होता है।
9. आत्मकथा में लेखक की निजी स्मृतियों का अंकन होता है।

कह सकते हैं कि आत्मकथा गद्य साहित्य की वह विधा है जिसमें लेखक अपने जीवन की प्रमुख घटनाओं को अपने मानवीय अनुभव को निष्पक्ष, स्पष्ट एवं ईमानदारी से व्यक्त करता है। साथ ही वर्तमान के आलोक में अतीत की अभिव्यक्ति लेखक अपने स्मृति के आधार पर करता है। 'आत्मकथा' लेखक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के यथार्थ उद्‌घाटन की

विधा है। इसमें तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, पारिवारिक, धार्मिक आदि स्थितियों की अभिव्यक्ति होती है। ईमानदारी, स्पष्टता, यथार्थपरकता आदि इसका प्रमुख गुण है। 'रामस्वरूप चतुर्वेदी' ने आत्मकथा में निर्वैयक्तिकता का गुण महत्वूपर्ण माना है –

"आत्मकथा लेखक में विनम्रता का गुण उतना अपेक्षित नहीं जैसा सामान्यतः समझा जाता है जितना निर्वैयक्तिकता का। इस निर्वैयक्तिकतावृत्ति के कारण आत्मकथा निश्चय ही आधुनिक और अपेक्षया कठिन कला है।"[24]

(ग) आत्मकथा के तत्व

आत्मकथा में 'स्व' का चित्रण होता है, पर 'स्व' व्यष्टि और समष्टि के विश्लेषण से ही मूर्त होता है। इसमें लेखक केवल अतीत की स्मृतियों का ही उद्‌घाटन नहीं करता बल्कि तत्कालीन परिस्थितियों का भी चित्रण करता है और इन्हीं के बीच अपने व्यक्तित्व के विकास को दर्शाता है। आत्मकथा में विशेष जोर आत्मान्वेषण तथा आत्मालोचन पर दिया जाता है, तथ्यों के प्रस्तुतीकरण पर नहीं। यदि तथ्यों के प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया जाने लगेगा तो आत्मकथा जीवनी स्तर की बनकर आत्मकथा का मात्र आभास ही दे सकेगी। 'शशिभूषण सिंहल' ने इस बात को स्वीकार करते हुए लिखा है –

"इसमें वस्तुपरकता और आत्मपरकता दोनों का समुचित समन्वय अपेक्षित है केवल जीवन की घटनाओं का उल्लेख करने से रचना के इतिवृत्त कथन और पत्रकारिता तक सीमित रहने की आशंका है। दूसरी ओर रचना के आत्मपरक मात्र हो जाने पर निबन्ध अधिक और जीवनयात्र वृत्तान्त कम हो जायेगा। इसमें लेखक अपने जीवन को जितना तटस्थता से वर्णन करके अनुभवों के विवेचन में जितनी गहराई लाता है, आत्मकथा उतनी ही प्रामाणिक और प्रभावी बन पड़ती है।"[25]

आत्मकथा को अन्य समरूप साहित्य विधाओं से पृथम करने तथा उसके विशेषत्व की रक्षा करने के लिए यह आवश्यक है कि आत्मकथा के तत्वों का निर्धारण किया जाय। आत्मकथा की पहचान जिन तत्वों के आधार पर की जा सकती है वह निम्नलिखित है –

1. 'स्व' की अभिव्यक्ति

आत्मकथा में लेखक 'स्व' को स्वयं प्रक्षेपित करता है। यह आत्मकथा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। 'बैजनाथ सिंह' ने इसे आत्मकथा के तत्वों में दूसरे स्थान पर रखा है –

"आत्मकथा का लेखक चूंकि स्वयं वही व्यक्ति होता है जिसका जीवन उसमें चित्रित रहता है इसलिए स्व–लेखन उसकी दूसरी महत्वपूर्ण शर्त है।"[26]

इस बात को सभी विद्वानों ने माना है कि आत्मकथा में लेखक अपने जीवन का चित्रण करता है। उसका नायक स्वयं लेखक होता है। लगभग सभी विधाओं में 'आत्म' की अभिव्यक्ति किसी न किसी रूप में होती है परन्तु आत्मकथा में आत्म की अभिव्यक्ति कुछ अधिक होती है। इसलिए आत्मकथा को एक आत्मनिष्ठ विधा माना जाता है। 'गुलाबराय' ने लिखा है –

"आत्मकथा लेखक जितना अपने बारे में जान सकता है उतना लाख प्रयत्न के बाद भी कोई दूसरा नहीं जान सकता ... उसे अपने गुणों के उद्घाटन में आत्मश्लाघा या अपने मुंह मियां मिट्ठू बनने की दूषित प्रवृत्ति से बचाना चाहिए।"[27]

आत्मकथा में 'स्व' की अभिव्यक्ति ईमानदारी से होना चाहिए।

2. स्मृति –

स्मृति के अभाव में आत्मकथा लिखना असम्भव है क्योंकि आत्मकथा में लेखक अपने जीवन की घटनाओं को अपने स्मृतियों के आधार पर ही पुनःसृजित करता है। इसलिए इसमें संस्मरण, डायरी आदि का भी प्रयोग किया जा सकता है। आत्मकथाकार अतीत एवं वर्तमान का समन्वय स्मृति के आधार पर ही करता है। यशपाल का भी मत है –

"आत्मकथा या आप बीती लिखकर मैं पाठकों के सम्मुख आदर्श मार्ग रखने का संतोष अनुभव नहीं कर सकता। इसलिए इस कहानी को केवल स्मृतियों और अनुभवों का विचारार्थ वर्णन ही समझना चाहिए।"[28]

आत्मकथा में यह आवश्यक नहीं है कि वह अपने बीते हुए जीवन की सभी स्मृतियों का समावेश करें। इसका कारण यह है कि सभी स्मृतियों को याद रखना कठिन है और जो विशिष्टता से युक्त होती है वह याद रहती है। यह भी कारण होता है कि लेखक जान–बूझकर कई स्मृतियों को प्रस्तुत नहीं करता है। आत्मकथा को कलात्मक बनाने के लिए लेखक तमाम स्मृतियों में से उन घटनाओं को चुनता है जिसका कलात्मक मूल्य होता है और जो उसके व्यक्तित्व एवं उद्देश्य को उभारने में समर्थ होते हैं। दूसरे स्मृतियों को जानबूझकर भूल जाता है। ऐन्द्रे मोरिस ने इस स्थिति को 'Delibrate forgetfullness on the aesthetic ground' कहा है। आत्मकथाकार अपने व्यक्तित्व को उजागर करने वाली विशिष्ट स्मृतियों को चयन कर आत्मकथा में संलग्न करता है।

(3) कथात्मकता –

आत्मकथा जीवन की कलात्मक अनुकृति है। इसलिए इसकी कथात्मकता अन्य विधाओं की कथा से भिन्न होती है। 'कमलेश सिंह' ने आत्मकथा की कथा को 'अपूर्वा

कथा' कहा है –

"सामान्य कथा कल्पित होने के कारण प्रारम्भ, विकास और अन्त की दृष्टि से सुनियोजित तथा व्यवस्थित होती है। इस प्रकार आत्मकथा को कथा के प्रकारों में 'अपूर्वा कथा' भी कहा जा सकता है। इसका कारण यह है कि कोई भी व्यक्ति अपनी मृत्यु के पश्चात तो अपनी जीवन कथा लिख नहीं सकता फिर भी जीवित रहकर लिखते हुए जीवन का बहुत अधिक नहीं तो थोड़ा अंश तो शेष रह ही जाता है।"[29]

उदाहरण स्वरूप यशपाल की आत्मकथा 'सिंहावलोकन' को लिया जा सकता है जिसमें यशपाल के केवल क्रांतिकारी जीवन का ही चित्रण है, शेष पक्ष अछूता है। जो कार्य उन्होंने जेल से निकलने के बाद किया उसकी कथा इसमें नहीं है। आत्मकथा में जीवन की कथा को यथातथ्य रूप से चित्रित किया जाता है। परन्तु यह शुष्क इतिहास नहीं होता है। इसमें मार्मिकता, कलात्मकता, रोचकता आदि विद्यमान रहता है। आत्मकथा की कथात्मकता में कई बातों का ध्यान देना पड़ता है –

(i) घटनाओं या प्रसंगों का चुनाव

आत्मकथामें लेखक अतीत की विस्तृत घटनाओं में से अनिवार्य घटनाओं का चुनाव वर्तमान बोध के आलोक में करता है। राय पास्कल ने स्वीकार किया है –

"आत्मकथा में जीवन की उलझी हुई प्रक्रिया के बीच तथ्यों का चुनाव महत्त्वपूर्ण घटनाओं का विभाजन, विश्वलेषण, अभिव्यक्ति का चुनाव इन सबका आधार लेखकीय वर्तमान दृष्टिकोण से निश्चित होता है।"[30]

आत्मकथा में लेखक उन्हीं घटनाओं का चयन करता है जो उसके व्यक्तित्व एवं उद्देश्य को उभारने में समर्थ होता है। वह जीवन के महत्त्वपूर्ण घटनाओं का ही चयन करता है। महत्त्वपूर्ण घटनाओं के चयन का अर्थ केवल महानता सिद्ध करने वाली घटनाओं के चयन से नहीं है। साधारण घटनाएं भी कभी–कभी विशेष रूप से अभिव्यक्त होती हैं। घटनाओं को चयन में रोचकता का होना अनिवार्य नहीं, बल्कि महत्त्वपूर्ण यह है कि घटनाएं वर्तमान बोध की दृष्टि से कहाँ तक सार्थक सिद्ध होती हैं। कई बार रोचक घटनाएं लेखक की दृष्टि में निरर्थक एवं अनावश्यक होती हैं। इसलिए लेखक अपने दृष्टिकोण के अनुसार घटनाओं का चयन करता है।

(ii) व्यक्तित्व का चित्रण

आत्मकथाकार अपने व्यक्तित्व का चित्रण करने के साथ–साथ प्रसंगानुसार उन पात्रों के व्यक्तित्व का भी चित्रण करता है जो लेखक के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

आत्मकथा में जिस व्यक्तित्व का चित्रण होता है वह वास्तविक होता है काल्पनिक नहीं। लेखक आत्मकथा में अपने समकालीन व्यक्तियों या ऐतिहासिक पुरुषों के क्रिया–कलापों, व्यवहारों तथा विचारों को व्यक्त करता है।

(iii) वर्ण्य–विषय –

आत्मकथा में लेखक आत्मनिरीक्षण, आत्मालोचन आदि के द्वारा देश–दुनिया एवं अपने जीवन की अनेक घटनाओं और उससे सम्बद्ध क्रिया–प्रतिक्रिया का निःसंकोच वर्णन करता है। 'चन्द्रावती सिंह' ने आत्मकथा का वर्ण्य–विषय जीवन और संसार दोनों को माना है –

"आत्मचरित अपने ही जीवन और मस्तिष्क का विश्लेषण कर जीवन और संसार को समझने का प्रयत्न है। उसकी मुख्य विशेषता बल्कि उसका मुख्य प्रवाह अपने और संसार के सम्बन्ध में एकाग्र चिन्तन है।"[31]

आत्मकथा का वर्ण्य–विषय 'स्व' के साथ–साथ समाज भी है। इसलिए जहाँ साहित्यिक पुरुषों ने आत्मकथा लिखी वहीं अनेक सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक महापुरुषों ने भी आत्मकथा लिखी है। ओमप्रकाश सिंहल ने कहा है कि यह विधा मात्र साहित्यकारों की विधा नहीं है –

"साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, पत्रकारों, शिक्षकों, वकीलों, समाज–सेवकों, फिल्मी कलाकारों आदि ने अपनी–अपनी आत्मकथाएं लिखकर भारतीय समाज के विविध रूपों का अत्यन्त सजीव एवं प्रामाणिक चित्र उभारा है। ... इसमें परिवार के व्रत, उत्सव, अंधविश्वास, परम्पराएं, जीवनमूल्य आदि सभी को स्थान मिला है।"[32]

(iv) क्रमबद्धता

'आत्मकथा' लेखक के जीवन के विशेष समय एवं क्षण की झांकी होती है। इसलिए आत्मकथा के लिए क्रमबद्धता अनिवार्य होती है। आत्मकथा का कोई क्षण, प्रसंग या घटना अपने आप में स्वतंत्र नहीं होती। प्रत्येक प्रसंग अपने अगले तथा पिछले प्रसंगों से श्रृंखला की तरह जुड़े होते हैं और इस श्रृंखला के विकास में लेखक के व्यक्तित्व का विकास रूपायित होता है। शिप्ले ने लिखा है –

"उसे लेखक के जीवन का एक श्रृंखलाबद्ध ऐसा विवरण कह सकते हैं जिससे वह अपने विशाल जीवन सामग्री की पृष्ठभूमि में से महत्वपूर्ण बातों को लेकर उनको व्यवस्थित ढंग से सामने रखता है, या फिर अपनी अन्तर्दृष्टि से उनको संस्मरण के रूप में प्रस्तुत करता है।"[33]

(अ) निष्पक्षता एवं तटस्थता

आत्मकथा में आवश्यक है कि लेखक द्वारा निष्पक्ष एवं तटस्थ भाव से आत्मविवेचन प्रस्तुत किया जाए। इसमें मानवीय अनुभूतियों, भावों, विचारों तथा क्रिया–कलापों को निष्पक्ष भाव से व्यक्त करना होता है। निष्पक्ष और तटस्थ भाव से लिखी गई आत्मकथा ही महत्वपूर्ण होती है। बैजनाथ सिंहल ने आत्मकथा के तत्वों में तटस्थता को महत्त्वपूर्ण माना है –

"आत्मकथा की सबसे बड़ी विशेषता, जिस पर उसका पूरा लेखन और महत्त्व निर्भर करता है, वह है – तटस्थता। ... बिना तटस्थ रहे आत्मकथा में ईमानदारी आ ही नहीं सकती। आत्मकथा इसी दृष्टि से तो एक जोखिम भरा काम है।"[34]

(4) देशकाल वातावरण (परिवेश)

आत्मकथा का केन्द्रीय विषय स्वयं लेखक होता है, परन्तु उसको देशकाल वातावरण भी प्रभावित करता है। इसलिए परिवेश अनुकूल हो या प्रतिकूल लेखक के अन्तर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति के साथ यह भी व्यक्त या अव्यक्त रूप से आत्मकथा में विद्यमान रहता है। राजेन्द्र, यशपाल आदि ने अपनी आत्मकथा में तत्कालीन परिस्थितियों का ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत किया है। यशपाल ने स्वतन्त्रता संग्राम के समय की अनेक घटनाओं का वर्णन किया है। उदाहरण के रूप में 'रोलेट एक्ट' के विरोध का एक प्रसंग लिया जा सकता है –

"भीड़ की टुकड़ियां जगह–जगह रोलेट–कानून का सियापा करती फिर रही थी – 'हाय–हाय रोलेट बिल।' जगह–जगह तत्कालीन ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम की वर्दियां जलाई जा रही थी। ... बीसयों जगह गोली चली, परन्तु हड़ताल जारी रही। ... सरकार को भारतीय पुलिस और फौज की राजभक्ति में संदेह होने लगा। ... गोरी फौज तैनात कर दी गई।" [35]

किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके सम्पर्क में आने वाले परिवेश से बनता और बिगड़ता है। अतः इसकी चर्चा किये बिना लेखक का व्यक्तित्व उभर नहीं सकता। आत्मकथा में तत्कालीन ऐतिहासिक वातावरण अपने पूरे प्रभाव के साथ सक्रिए रहता है।

(5) शैली

आत्मकथाकार की दृष्टि तथा विचारों में परिवर्तन के साथ–साथ शैली में भी परिवर्तन होता है। इसीलिए लेखक कभी भावात्मक शैली का प्रयोग करता है तो कभी विचारात्मक। कभी व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग करता है तो कभी आत्मवादी (अहंवादी)

शैली का। आत्मकथा एक साहित्यिक विधा है इसलिए यह कलात्मक है। आत्मकथा कलात्मक तभी होगी जब लेखक अपनी बात को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करेगा। बैजनाथ सिंहल ने लिखा है –

"शैली और शिल्प के साहित्यिक उपादान इसमें कलात्मक चरण उत्पन्न कर सकते हैं।"[36]

आत्मकथा में 'स्व' से बच पाना कठिन होता है। इसलिए लेखक कभी–कभी आत्मवादी (अहंवादी) शैली में अपनी बातो को रखता है। श्यामसुन्दर दास की आत्मकथा 'मेरी आत्मकहानी' में यह देखा जा सकता है। आत्मकथा में घटनाओं को यथातथ्य रूप से प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए इसकी भाषा जीवन्त और लोकव्यवहृत होती है।

(6) उद्‌देश्य

साहित्य की प्रत्येक विधाओं का कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है। परन्तु आत्मकथा का उद्‌देश्य अन्य विधाओं से भिन्न है। इसका उद्‌देश्य आत्मपरीक्षण, आत्मसमर्थन, आत्माभिव्यक्ति, आत्मालोचन, संसार की समस्याओं का चित्रण अपने स्मृतियों का पुनः सृजित करना, अपने जीवन के अनुभवों को लोगों तक पहुंचाना तथा अपने जीवन के माध्यम से पाठक को प्रेरणा देना आदि हो सकता है। लेखक आत्मकथा के माध्यम से लोकमंगल चाहता है। चन्द्रावती सिंह ने आत्मकथा के उद्‌देश्य को इस प्रकार स्पष्ट किया है –

"आधुनिक समाज में व्यक्ति की दो प्रवृत्तियां उत्तरोत्तर तीव्र होती जा रही है – (1) वह अपने व्यक्तित्व का उभार चाहता है और अपने विचारों, मनोभावों के प्रति समाज की सहानुभूति प्राप्त करना चाहता है। (2) वह आत्म–अध्ययन और आत्मविश्लेषण कर विश्व और मानव समाज को समझना चाहता है। वह नित्य छान–बीन में लगा है, और उसमें वह अपनी परीक्षा किया करता है। इन दो प्रवृत्तियों का अनिवार्य परिणाम आत्म–जीवनी साहित्य का भविष्य में अधिक प्रसार और उत्थान है।"[37]

'हरिवशं राय बच्चन' ने क्या भूलँ क्या याद करूँ' की भूमिका में लिखा है –

"मैं चाहता हूँ कि लोग मुझे मेरे सरल, स्वाभाविक और साधारण स्वरूप में देख सकें।"[38]

आत्मकथा के उद्‌देश्य के संबंध में 'रवीन्द्र भ्रमर' का मत है –

"आत्मकथा लिखते समय कोई व्यक्ति अपने विगत जीवन और कृतित्व के पक्ष में अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना चाहता है अथवा अपनी उपलब्धियों और अनुभवों को

मूल्यवान समझ कर उन्हें भावी पीढियों के लिए छोड़ जाना चाहता है।"[39]

'स्व' की अभिव्यक्ति के साथ आत्मकथा का उद्‌देश्य समाज के लोगों का उत्थान करना तथा लेखक के जीवनी से कुछ सीख लेना भी है।

आत्मकथा के स्वरूप तथा तत्व के विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आत्मकथा विधा अन्य सभी विधाओं से अधिक प्रामाणिक और जीवन के निकट है। यही कारण है कि इस विधा का लेखन उतना आसान नहीं जितना अन्य विधाओं का। गद्य लेखन यदि कवियों की कसौटी कहा जाता है तब आत्मकथा लेखन गद्य लेखकों की कसौटी कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

(घ) आत्मकथा की परम्परा

आत्मकथा का उदय एक स्वतंत्र विधा के रूप में आधुनिक काल में हुआ। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इससे पहले आत्मकथा लिखी ही नहीं गई। आधुनिक काल से पहले कुछ आत्मकथाएं पद्य के रूप में मिलती हैं। 'बनारसीदास' कृत 'अर्धकथानक' ऐसी ही एक पद्यात्मक आत्मकथा है जो मध्यकाल में लिखी गई। इसे 'रामचन्द्र तिवारी' ने हिन्दी आत्मकथा का प्रारम्भिक बिन्दु माना है। किन्तु इसके बाद समस्त मध्यकालीन साहित्य में कोई आत्मकथा नहीं मिलती। इसीलिए डॉ. कमलेश ने इसको आधुनिक युग की देन कहा है। 'आचार्य शुक्ल' के समय तक आत्मकथा लेखन इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी। शायद इसीलिए वे अपने इतिहास में इसके बारे में अधिक नहीं लिखे हैं। एक जगह उन्होंने लिखा है –

"आत्मकथा का विकास भी नहीं पाया जाता। केवल जैन कवि बनारसीदास का अर्धकथानक मिलता है।"[40]

अनेक विद्वानों का मानना है कि आत्मकथा विधा का विकास पश्चिमी साहित्य से प्रभावित है। परन्तु यह विचार उचित नहीं है, क्योंकि भारत में आत्मकथा बहुत पहले ही लिखी जा चुकी है। अर्धकथानक, बाबरनामा आदि इस प्रकार की मान्यता कि 'आत्मकथा की चेतना पश्चिम से उद्‌भुत हुआ है' पर प्रश्चनचिह्न अंकित करते हैं। यह विधा वैदिक युग से आधुनिक युग तक भले ही प्रौढ़ विधा के रूप में नहीं रहा हो परन्तु यत्र–तत्र यह 'प्रकाश रेखा' के रूप में दिखाई देता रहा है। जो प्राचीन शिलालेख, ताम्रलेख आदि मिलते हैं वे किसी न किसी रूप में आत्मकथा ही है। आत्मकथा के विकास के सम्बन्ध में बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है –

"जहाँ तक आत्मचरित लिखने की प्रथा का सम्बन्ध है, आधुनिक भाषा में हिन्दी का नम्बर सबसे अव्वल आता है। कविवर बनारसीदास जैन का 'अर्धकथानक' सन 1641 ई.

में लिखा गया था। इससे अधिक पुराना आत्मचरित मराठी, बंग्ला, गुजराती इत्यादि में भी मिलता नहीं। स्वयं रूसो का आत्मचरित जो अपनी स्पष्टवादिता के लिए प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ के कितने वर्षों के बाद लिखा गया था।"[41]

हिन्दी की प्रथम आत्मकथा बनारसीदास जैन की अर्धकथानक है जो कविताबद्ध जीवनगाथा है। इसमें लेखक ने अपने जीवन की किसी भी घटना पर पर्दा नहीं डाला है। चन्द्रावती सिंह ने इस बात को माना है –

"लेखक ने अपना स्पष्ट चरित्र उपस्थित करने की घोषणा की है और खोलकर अपनी बात कही है।"[42]

1860 ई. में दयानन्द सरस्वती ने अपनी आत्मकथा 'आत्मचरित' लिखी जिसका अनुवाद 'थियोसोफिस्ट' में प्रकाशित हुई। व्यवस्थित रूप से आत्मकथा लिखने की परम्परा भारतेन्दु युग से मानी जाती है। यद्यपि भारतेन्दु ने अपनी कोई विस्तृत आत्मकथा तो नहीं लिखी लेकिन इनके द्वारा 1876 में मात्र दो पृष्ठों में लिखी 'एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती' में आत्मकथा के तत्व मिलते हैं। परन्तु इसका स्वरूप निर्धारित कर पाना बहुत कठिन हो जाता है कि यह पूर्ण होता तो क्या होता जीवन, उपन्यास, आत्मकथा या कुछ और। भारतेन्दु युग के साहित्यकार राधचरण गोस्वामी ने 'मेरा संक्षिप्त जीवन चरित' तथा प्रतापनारायण मिश्र ने 'आप बीती जग बीती' हास्य व्यंग्य शैली में लिखा है, किन्तु यह भी बहुत छोटा ही है। 'अम्बिकादत्त व्यास' कृत 'निज वृत्तांत' (1901) 56 पृष्ठों की आत्मकथा है। यह आत्मकथा कम वृत्तन्त अधिक है। 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में 'सत्यानन्द अग्निहोत्री' कृत 'मुझमें देव जीवन का विकास' (1910), सुधाकर द्विवेदी की 'रामकहानी' परमानन्द भाई की 'आबीती' तथा श्रद्धानन्द सन्यासी की 'कल्याण मार्ग का पथिक' (1924) प्रकाशित हुई।

हिन्दी साहित्य के आत्मकथा की परम्परा में राजनैतिक महापुरुषों की आत्मकथा ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। रामप्रसाद बिस्मिल कृत 'आत्मकथा' आकार में भले ही छोटी है परन्तु यह श्रेष्ठ आत्मकथा है। बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है –

"बिस्मिल के इस आत्मचरित के मुकाबले का ग्रन्थ केवल हिन्दी साहित्य में ही नहीं, वरन भारत की अन्य भाषाओं के साहित्य में भी मुश्किल से मिलेगा।"[43]

महात्मा गांधी की आत्मकथा 'My experiment with truth' का हिन्दी में 'सत्य के प्रयोग' नाम से अनुवाद हुआ है। इसी प्रकार जवाहरलाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोष और राधाकृष्णन की आत्मकथाओं का अनुवाद 'मेरी कहानी', 'तरूण के स्तवन' और 'सत्य की खोज' के नाम से हुआ है। राजेन्द्र प्रसाद कृत 'आत्मकथा' (1947) मूलतः हिन्दी में है। यह

आत्मकथा अन्य राजनीतिज्ञों की आत्मकथा से अधिक स्तरीय है।

1932 में प्रेमचन्द ने 'हंस आत्मकथांक' प्रकाशित किया जिसमें कई लेखकों के आत्मकथात्मक लेखों को सम्मिलित किया गया है। इस अंक ने आत्मकथा को एक आन्दोलन का रूप दिया। यह इकलौती पत्रिका थी जिसमें आत्मकथा से सम्बन्धित अनेक लेख छपे। नन्ददुलारे वाजपेयी ने इस अंक का बहुत विरोध किया था, परन्तु आत्मकथा के सम्बन्ध में इस अंक के सहयोग को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। इसमें रामनारायण मिश्र की 'आदमी की पहचान' शिवपूजन सहाय की 'मतवाला कैसे निकला', विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक की 'मेरा वह बाल्यकाल', लक्ष्मीधर वाजपेयी की 'मेरी सहयोगिनी' आदि प्रकाशित हुई। विजयेन्द्र स्नातक ने हंस 'आत्मकथांक' का महत्व स्वीकार किया है –

"आत्मकथा साहित्य के क्षेत्र में हंस का आत्मकथांक ऐतिहासिक महत्व रखता है।"[44]

महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत 'मेरी जीवन रेखा' 1933 में प्रकाशित हुई, जो मात्र नौ पेज की है। बाबू गुलाबराय की आत्मकथा 'मेरी असफलताएं' 1941 हिन्दी की प्रसिद्ध आत्मकथा है। वैसे इसे आत्मकथा न कहकर आत्मकथात्मक निबन्ध कह सकते हैं। श्यामसुन्दर दास की आत्मकथा 'मेरी आत्म कहानी' 1941, एक साहित्यिक आत्मकथा है। चन्द्रावती सिंह इसे महत्वपूर्ण आत्मकथा नहीं मानती –

"यदि श्यामसुन्दर दास हिन्दी संसार के अत्यन्त प्रसिद्ध व्यक्ति न होते तो उनकी आत्मकथा पर विचार करने की आवश्यकता ही न होती।"[45]

हरिभाउ उपाध्याय कृत 'साधना के पथ में' 1945 में प्रकाशित हुई। नामवर सिंह ने आत्मकथा का विकास छायावाद की आत्माभिव्यक्ति की भावना से माना है –

"यह आत्माभिव्यक्ति की भावना इस युग में कितनी व्याप्त रही है इसका पता इसी से चलता है कि 'आत्मकथा' लिखने की परम्परा–सी चल पड़ी। गांधी, नेहरू, रवीन्द्रनाथ, श्रद्धानन्द, श्यामसुन्दर दास, वियोगी हरि, राहुल सांकृत्यायन आदि न जाने कितने राजनीतिज्ञों, धर्मसुधारकों और साहित्यकारों ने अपनी आत्मकथा अथवा जीवन स्मृति लिखी है। इतने बड़े पैमाने पर इस देश में आत्मकथाएं पहले शायद ही कभी लिखी गई। मध्य युग के हिन्दी साहित्य में केवल एक आत्मकथा मिलती है, बनारसीदास जैन की अर्धकथा। ये आत्मकथायें इस युग में प्रचलित वैयक्तिक आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षा की द्योतक हैं।"[46]

भवानीदास संयासी कृत 'प्रवासी की आत्मकथा' में इतिहास, उपन्यास, यात्रा वर्णन, संस्मरण का चित्रण एक साथ मिलता है। राहुल सांकृत्यायन कृत 'मेरी जीवन यात्रा' पांच

भागों में विभाजित हैं। सामाजिक क्षेत्र में कार्य करने वाले वियोगी हरि की आत्मकथा 'मेरा जीवन प्रवाह' 1948 में तथा सत्यदेव परिव्राजक की 'स्वतंत्रता की खोज' 1951 में प्रकाशित हुई। यशपाल की आत्मकथा 'सिंहावलोकन' तीन भागों में प्रकाशित हुई है। इसमें तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक स्थितियों एवं क्रांतिकारी दलों का पूरा इतिहास वर्णित है। संस्मरणात्मक शैली में लिखित 'शांतिप्रिय द्विवेदी की आत्मकथा 'परिव्राजक की प्रजा' 1952 में तथा भावात्मक शैली में लिखी हुई 'देवेन्द्र सत्यार्थी' की 'चांद सूरज के वीरन' 1953 में प्रकाशित हुई। जानकी देवी बजाज कृत 'मेरी जीवन यात्रा' एक स्त्री की अद्‌भुत आत्मकथा है। सेठ गोविन्ददास कृत 'आत्मनिरीक्षण' में राजनीतिक तथा पारिवारिक घटनाओं का वर्णन है। यह तीन भागों में विभाजित है। हजारीप्रसाद द्विवदी ने लिखा है –

"यह आत्मनिरीक्षण एक ओर जहाँ आपके बहुमूल्य व्यक्तित्व विकास की कहानी बताता है वहीं राष्ट्र के संघर्षशील जीवन और उत्तरोत्तर जटिल होने वाली राष्ट्रीय समस्याओं की अनेक ग्रन्थियों पर प्रकाश डालती है।"[47]

'बचपन के दो दिन' (1959), देवराज उपाध्याय की एक विशिष्ट आत्मकथा है। इसी के साथ 'पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी' की आत्मकथा 'मेरी आत्मकथा' प्रकाशित हुई। 'बेचन शर्मा उग्र' की आत्मकथा 'अपनी खबर' हिन्दी की एक सफल आत्मकथा है। इसका प्रकाशन 1960 ई. में हुआ। आत्मकथा के लिए जितनी ईमानदारी, तटस्थता तथा निष्पक्षता लेखक में होनी चाहिए वह 'उग्र' में विद्यमान है। बड़ी बेबाकी से इन्होंने अपनी खबर के साथ ही साथ दूसरों की खबर ली है। इसमें लेखक के आरम्भिक जीवन के 21 वर्षों की कहानी प्रस्तुत की गई है।

आत्मकथा की परम्परा में प्रसिद्ध आत्मकथाकार हरिवंश राय बच्चन हैं। इनकी आत्मकथा है – 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' (1969), 'नीड़ का निर्माण फिर' (1970), 'बसेरे से दूर' (1977) तथा दशद्वार से सोपान तक (1986)। इसमें व्यष्टि और समष्टि दोनों का सम्यक चित्रण हुआ है। 'घर की बात' रामविलास शर्मा की विस्तृत आत्मकथा है। रामदरश मिश्र की आत्मकथा 'सहचर है समय' 1991 ई. में प्रकाशित हुई है।

महिला कथाकार में प्रतिभा अग्रवाल का नाम पहले लिया जाता है। इनकी आत्मकथा 'दस्तक जिन्दगी की' (1990), और 'मोड़ जिन्दगी की' (1996) दो खण्डों में प्रकाशित हुई। इसी प्रकार कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' 1997 में तथा पद्‌मा सचदेव की 'बूंद बावड़ी' 1999 में प्रकाशित हुई।

रामविलास शर्मा की आत्मकथा 'अपनी धरती अपने लोग' 1996 में, कमलेश्वर की 'जो मैं जिया' 1992 में 'यादों का चिराग' 1977 में तथा 'जलती हुई नीद' 1999 में प्रकाशित

हुई। रविन्द्र कालिया की 'गालिब छूटी शराब' (2000), भगवती चरण वर्मा की 'कहि न जाय का कहिए' (2001), राजेन्द्र यादव की 'मुड़–मुड़ कर देखता हूँ' (2001) आदि आत्मकथाएं आज विशेष रूप से चर्चित हुई। सूरजभाव चौहान ने अपनी आत्मकथा 'तिरस्कृत' (2002) और 'सन्तप्त' (2006) दो भागों में लिखी हैं। 'हादसे' (2005) रमणिका गुप्ता की प्रसिद्ध आत्मकथा है।

आज आत्मकथा के विकास को देखकर ऐसा लगता है कि हिन्दी आत्मकथा लेखन की नई–नई प्रवृत्तियां उभर रही हैं। अब महिला रचनाकार तथा दलित लेखक अपने दुःख–दर्द को व्यक्त कर रहे हैं। आज संख्या की दृष्टि से आत्मकथा भले ही कम है परन्तु कला एवं शैली की दृष्टि से किसी भी विधा से कम नहीं है। यद्यपि आत्मकथा विधा का विकास स्वतंत्रता के बाद विशेष रूप से हुआ। परन्तु आज भी आत्मकथा का विकास वैसा नहीं हो पाया है जैसा कि अन्य विधाओं का विकास हुआ है। मैनेजर पाण्डेय ने आत्मकथा की संख्या के कमी के कारण को बताया है कि –

"हिन्दी में आत्मकथा और जीवनी लेखन की दुर्दशा का मुख्य कारण व्यक्तिगत जीवन की सच्चाई कहने के साहस का और सहने की आदत का अभाव भी है।"[48]

रामचन्द्र तिवारी ने आत्मकथा की कमी के दो कारण बताये हैं –

"एक तो यह कि आत्मकथाओं में आत्मविज्ञापन या आत्मसमर्थन की प्रवृत्ति अधिक है, आत्मालोचन या आत्मपरीक्षण की कम। दूसरा कारण यह है कि अभी भी देश की महान विभूतियाँ आत्माभिव्यक्ति के लिए अंग्रेजी का ही सहारा ले रही है।"[49]

बच्चन सिंह ने राजेन्द्र प्रसाद, श्यामसुन्दर, शान्तिप्रिय द्विवेदी तथा बेचन शर्मा उग्र की आत्मकथा के सम्बन्ध में लिखा है –

"हिन्दी आत्मकथा का प्रभाव मेरे दिमाग पर दर्ज है वह इतना ही कि आकार में सबसे बड़ी आत्मकथा डा. राजेन्द्र प्रसाद की है, सबसे नीरस बाबू श्यामसुन्दर दास की, सबसे विगलित शांतिप्रिय द्विवेदी की 'परिव्राजक की प्रजा' और सबसे अक्खड़–फक्कड़, मुहफट पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की 'अपनी खबर'।"[50]

संदर्भ :

1. अपनी खबर – बेचन शर्मा उग्र, पृ. 9
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – विजयेन्द्र स्नातक, पृ. 423
3. Autobiography as the - Nominclature of Southey implies is the Biography of a Person written by himself. Its motivations are various among others Self. Serutenity for Self Indification; self Justification." Encyclopeadia of Britanica, val. IInd, Page-783
4. The Encyclopeadia America, vel. IInd, Page - 639
5. हिन्दी साहित्य कोश – सम्पादक डा. धीरेन्द्र वर्मा, भाग एक, पृ. 94
6. हिन्दी विधाएं : स्वरूपात्मक अध्ययन – डा. बैजनाथ सिंहल, पृ. 185
7. आस्था के चरण – डा. नगेन्द्र, पृ. 202
8. हिन्दी आत्मकथा–साहित्य का शैलीगत अध्ययन – डा. कमलापति उपाध्याय, पृ. 6
9. हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी – नन्ददुलारे वाजपेयी, पृ. 138
10. हंस – सं. राजेन्द्र यादव, पृ. 35
11. रसीदी टिकट – अमृता प्रीतम, पृ. 149
12. अपनी खबर – पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, पृ. 10–11
13. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डा. हुकुचन्द्र राजपाल, पृ. 462
14. बच्चन रचनावली भाग–7 – सं. अजित कुमार, पृ. 15
15. हिन्दी साहित्य का इतिहास – सं. डा. नगेन्द्र, पृ. 595
16. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 32
17. साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएं – कैलाशचन्द्र भाटिया, रचना भाटिया, पृ. 53
18. हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी – नन्ददुलारे वाजपेयी, पृ. 132
19. – वही – पृ. 138
20. – वही – पृ. 139

TH-17858

Nehru University Library

21. दिनकर की डायरी – रामधारी सिंह दिनकर, भूमिका
22. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डा. नगेन्द्र, पृ. 716
23. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित का विकास – चन्द्रावती सिंह, पृ. 19–20
24. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 161
25. साहित्यिक विधाएं : पुनर्विचार – डा. हरिमोहन, पृ. 248
26. हिन्दी विधाएं : स्वरूपात्मक अध्ययन – डा. बैजनाथ सिंहल, पृ. 186
27. साहित्यिक विधाएं : पुनर्विचार – डा. हरिमोहन, पृ. 247
28. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 10
29. साहित्यिक विधाएं : पुनर्विचार – डा. हरिमोहन, पृ. 249
30. हिन्दी आत्मकथा – डा. नारायण विष्णुदत्त शर्मा, पृ. 50
31. हिन्दी साहित्य में जीवनचरित का विकास – चन्द्रावती सिंह, पृ. 17
32. हिन्दी साहित्य का इतिहास – सं. डा. नगेन्द्र, पृ. 716
33. हिन्दी आत्मकथा साहित्य का शैलीगत अध्ययन – डा. कमलापति उपाध्याय, पृ. 2
34. हिन्दी विधाएं : स्वरूपात्मक अध्ययन – डा. बैजनाथ सिंहल, पृ. 188–189
35. सिंहावलोकन (भाग एक) – यशपाल, पृ. 31
36. हिन्दी विधाएं : स्वरूपात्मक अध्ययन – डा. बैजनाथ सिंहल, पृ. 189
37. हिन्दी साहित्य में जीवन–चरित का विकास – चन्द्रावती सिंह, पृ. 19
38. बच्चन रचनावली – सं. अजित कुमार, पृ. 20
39. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (चतुर्दश भाग अद्यतन काल) – डा. हरवंशलाल शर्मा, पृ. 484
40. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 128
41. हिन्दी साहित्य की नवीन विधाएं – कैलाशचन्द्र भाटिया, भूमिका
42. हिन्दी साहित्य में जीवन–चरित का विकास – चन्द्रावती सिंह, पृ. 84

43. हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास – डॉ. चन्द्रभानु सीताराम सोनवणे, पृ. 161
44. हिन्दी साहित्य का इतिहास – विजयेन्द्र स्नातक, पृ. 423
45. हिन्दी साहित्य में जीवन–चरित का विकास – चन्द्रावती सिंह, पृ. 204
46. छायावाद – नामवर सिंह, पृ. 21–22
47. हिन्दी आत्मकथा – डा. नारायण विष्णुदत्त शर्मा, पृ. 132
48. हंस – सं. राजेन्द्र यादव, पृ. 32
49. हिन्दी का गद्य साहित्य – डा. रामचन्द्र तिवारी, पृ. 402
50. हिन्दी आत्मकथा साहित्य का शैलीगत अध्ययन – डा. कमलापति उपाध्याय, पृ. 290

द्वितीय अध्याय

''सिंहावलोकन' और जीवन की सम्बद्धता'

(क) सिंहावलोकन' का कथ्य–विस्तार
(ख) यशपाल का शेष जीवन
(ग) यशपाल के जीवन और चिन्तन में स्वाधीनता एवं क्रांतिकारी दल

(क) 'सिंहावलोकन' का कथ्य–विस्तार

यशपाल ने अपनी आत्मकथा 'सिंहावलोकन' में अपने आरम्भिक जीवन से लेकर 1938 तक के जीवन काल को अंकित किया है। यशपाल सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता थे। आर्यसमाज से लेकर समाजवादी आन्दोलन तक की यात्रा में यशपाल कई राजनीतिक उतार–चढ़ाव देखे हैं। इन सबकी चर्चा 'सिंहावलोकन' में प्रस्तुत भी है। 'सिंहावलोकन' तीन भागों में विभक्त है। इसके प्रथम भाग का आरम्भ 'जोखिम की ओर प्रवृत्ति' नामक शीर्षक से होता है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' के प्रथम भाग में अपना बचपन, शिक्षा–दीक्षा, अपने परिवार आदि को चित्रित किया है। साथ ही नेशनल कालेज के अपने साथियों का परिचय विस्तार से दिया है, जिसमें भगत सिंह, सुखदेव, भारद्वाज तथा भगवतीचरण बोहरा प्रमुख हैं। किसका साथ कब और कैसे मिले तथा उनके मन में क्रांति की भावना कैसे उत्पन्न हुआ, इसका भी चित्रण प्रथम भाग में मिलता है। 'सिंहावलोकन' के प्रथम भाग का प्रकाशन 1950 ई. में हुआ है। यह कई शीर्षकों में विभाजित है; जैसे – जोखिम की ओर प्रवृत्ति, कांग्रेस असहयोग आन्दोलन में भाग, नेशनल कालेज, दल का काम, हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना। 'मधुरेश' ने लिखा है –

"सिंहावलोकन भाग एक में यशपाल ने विस्तार से उन कारणों की चर्चा की है जिन्होंने उन्हें और उन जैसे अनेक लोगों को इस जोखिम की ओर बढने को प्रोत्साहित किया।"[1]

'सिंहावलोकन' में यशपाल ने अपने जीवन के विकास को क्रम से रखा है। इनके पिता हीरालाल और माता प्रेमदेवी हैं। पिता की छोटी–सी दुकान थी। ये कभी–कभी रुपये ब्याज पर देते थे। माता पर आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रभाव था तथा उनके सामने आर्थिक समस्या भी थी इसलिए वह फिरोजपुर की छावनी में अध्यापिका बन गयी। पारिवारिक स्थिति का चित्रण करते हुए यशपाल ने लिखा है –

"पिता के परिवार के बारे में गर्व की ऐसी कोई बात नहीं सुनी। यह परिवार आपसी झगड़ों के कारण उजड़ गया था।... लोग उन्हें 'लाला' के आदर सूचक नाम से संबोधित करते थे। चाहे वे कैसी भी नौकरी क्यों न कर रहे हों। कांगड़े से पंजाब में आ बसने वाले हमारे कुछ संबंधी यदि आर्यसमाज के प्रभाव में न आ गये होते और उनकी कृपा से मेरी माँ को अक्षर–ज्ञान नसीब न हो गया होता तो मैं सम्भवतः कांगड़े के दूसरे गरीब खत्री नौजवानों की तरह पीठ पर गठरी में दुकान बांधे कुछ कारोबार करता या लाहौर, अमृतसर में बर्तन माँजने की ही नौकरी करता।"[2]

जीवन के विकास में शिक्षा का महत्व बढता जा रहा था और परिवार की आर्थिक स्थिति खराब थी इसलिए प्रेमदेवी अध्यापिका बनने की दिशा में सोचने लगी। कांगड़ा के

वातावरण में यह सम्भव नहीं था। अतः वह वहाँ से फिरोजपुर आकर अध्यापन कार्य करने लगी। उनका यह कार्य उस समय में क्रांतिकारी था। कांगड़ा जैसे परम्पराबद्ध अशिक्षित और पिछड़े इलाके की एक नारी की यह तेजस्वी प्रगतिशीलता एवं कर्मठता सराहनीय है। यशपाल को ये सारे गुण जन्मजात रूप में मिले। प्रेमदेवी पर आर्य समाज का प्रभाव गहरा था। इसलिए उन्होंने यशपाल को सात वर्ष की अवस्था में शिक्षा–दीक्षा के लिए गुरुकुल में प्रवेश करा दिया। यहाँ एक ओर राष्ट्रीयता पर विशेष बल दिया जाता था तो दूसरी ओर वैदिक धर्म एवं आर्य संस्कृति के प्रति आस्था को बनाये रखने के लिए प्रोत्साहित भी किया जाता था। इसका प्रभाव यशपाल पर भी पड़ा। इसलिए एक ओर जहाँ भारतीय संस्कृति के प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ वहीं दूसरी ओर अंग्रेजों के प्रति विकर्षण और घनीभूत होती गयी, जिसका सक्रिय रूप क्रांतिकारी जीवन में दिखाई पड़ता है। विदेशी शासन के प्रति यशपाल के मानस में पहले से ही घृणा और तिरस्कार का भाव था। इसके कई कारण इन्होंने 'सिंहावलोकन' में गिनाये हैं; जैसे – मूर्गियों का प्रसंग, द्रोणासागर का प्रसंग, सड़क पर सर्वसाधारण जनता द्वारा अंग्रेजों को सलामी लेते देखना आदि।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में लिखा है कि गुरुकुल में सबके साथ समानता का व्यवहार होता था किन्तु असमानता तथा सम्पत्ति के प्रति आदर वहाँ भी व्याप्त हो गई थी। इसलिए गुरुकुल में अमीर छात्र यशपाल के गरीबी का मजाक उड़ाया करते थे। साथ ही यहाँ स्त्रियों के लिये कोई स्थान नहीं था। ब्रह्मचर्य तथा संयम को अधिक महत्त्व दिया जाता था। देशप्रेम के साथ विषमता की पहचान उन्हें यहीं हुई। गुरुकुल की शिक्षा तथा यहाँ के उनके निजी अनुभव यशपाल के जीवन और चिन्तन–मनन को अन्त तक प्रभावित किया। यहाँ उनके पर सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों तरह से प्रभाव पड़ा; जैसे – अंग्रेजों के प्रति घृणा, राष्ट्रीय भावना तथा स्वाधीनता की भावना का साकारात्मक प्रभाव पड़ा और गरीबी के प्रति घृणा तथा स्त्रियों के प्रति स्वाधीनता आदि को लेकर नकारात्मक। मधुरेश ने इस संबंध में लिखा है –

"यहाँ गुरुकुल में यशपाल को एक ओर आर्यसमाज की पुनरुत्थानवादी प्रवृत्तियों को निकट से देखने–समझने का अवसर मिला, वहीं अपनी निर्धनता का कचोट भरा अनुभव भी हुआ।"[3]

यशपाल मानते हैं कि उस समय आर्यसमाजी आन्दोलन में साम्प्रदायिकता थी परन्तु हिन्दू समाज में व्याप्त कुसंस्कारों एवं रूढ़ियों आदि से मुक्ति दिलाने में आर्य समाज की बहुत उपयोगी भूमिका रही है –

"उस समय भी आर्यसमाजी आन्दोलन का रूप साम्प्रदायिक जरूर था। वह वैदिक धर्म की पुन' स्थापना की घोषणा करता था। वैदिक धर्म की पुनः स्थापना की पुकार का

अर्थ मुख्यतः हिन्दू सम्प्रदाय को असंगतियों, रूढ़ियों के कुसंस्कारों और मिथ्या विश्वासों से मुक्त करना था। उसका कार्य क्षेत्र साम्प्रदायिक सीमाओं के भीतर प्रगतिवादी और क्रांतिकारी भी था। उस समय आर्यसमाज के आन्दोलन का विशेष रूझान सामाजिक समस्याओं की ओर था। शिक्षा प्रचार, विधवा विवाह, जन्म से वर्णव्यवस्था की धारणा को तोड़ना और अछूत समझी जाने वाली जातियों के लिए मनुष्यता के अधिकारों की मांग इस आन्दोलन के प्रमुख भाग थे। इस प्रगतिशील भावनाओं का स्वाभाविक परिणाम विदेशी दासता से असंतोष भी हुआ।"[4]

अतः आर्यसमाज में पुनरुत्थान और साम्प्रदायिकता के तत्व विद्यमान होते हुए भी इसमें प्रगतिशीलता विद्यमान थी। 'एक समय ऐसा था कि कोई भी व्यक्ति आर्यसमाजी बन जाने से ही संस्कार की दृष्टि से राजनैतिक रूप से संदिग्ध हो जाता था। उस समय किसी नवयुवक के आर्यसमाजी बन जाने पर परिवार के लोग ऐसे ही चेहरे लटका लेते थे जैसे कि आजकल (1950–1951) में घर के लड़के कम्युनिस्ट बन जाने पर आशंका अनुभव की जाती है।"[5] यशपाल के जीवन में आर्यसमाज के प्रभाव के संबंध में बैजनाथ राय ने लिखा है –

"अंग्रेजों से घृणा के कारण साम्राज्यवाद से घृणा, गरीबी से घृणा ये भावनाएं आर्यसमाजी यशपाल, क्रांतिकारी यशपाल, साम्यवादी यशपाल और साहित्यकार यशपाल के मानस पटल पर बद्धमूल भाव से अन्त तक अंकित है जो क्रिया या प्रतिक्रिया के रूप में उनके जीवन के सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होती हैं। ..."[6]

यशपाल ने गुरुकुल के वातावरण में व्याप्त आध्यात्मिकता तथा संयम का विरोध किया। उन्होंने सात वर्ष तक गुरुकुल कांगड़ी में रहकर अध्ययन किया था। इसीलिए इस आत्मकथा में गुरुकुल के वातावरण को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है। यहाँ उन्होंने रचनात्मक कार्य भी किये किन्तु संग्रहणी हो जाने के कारण उन्हें गुरुकुल छोड़ना पड़ा। इसके बाद वे डी.ए.वी. स्कूल में दाखिल हो गये। गुरुकुल से बाहर निकलकर जब लाहौर पहुँचे तो उन्हें वहाँ का समाज आतंक से युक्त लगा। वे अपने को स्थान भ्रष्ट और दबा हुआ महसूस करने लगे क्योंकि वे लाहौर में गुरुकुल की तरह अंग्रेज विरोधी बातें खुलकर नहीं कर सकते थे। मिडिल स्कूल पास करने के बाद यशपाल 'मनोहर लाल मेमोरियल हाई स्कूल' में दाखिल हुए। इस समय छावनी में अछूत बालकों के लिए रात्रि पाठशाला चलती थी यशपाल वहाँ अवैतनिक रूप से पढ़ाते थे। दूसरे कई लोग भी वहाँ पढ़ाते थे लेकिन अवैतनिक होने के कारण एक–एक कर वे पाठशाला छोड़ने लगे। आगे चलकर वेतन देने का निश्चय किया गया और यशपाल हेडमास्टर बने तथा उन्हें 8 रुपये मासिक वेतन दिया जाने लगा। यह उनकी पहली कमाई थी।

रोलेट एक्ट के विरोध में कांग्रेस के असहयोग आन्दोलन का यशपाल पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि मैट्रिक की परीक्षा समाप्त होते ही वे कांग्रेस के स्वयं सेवक के रूप में काम करने लगे। वे गांव–गांव जाकर भाषण देते तथा विदेशी कपड़ों के बहिष्कार के लिए लोगों को प्रोत्साहित करते।

1922 में चौरी–चौरा में जनता और पुलिस के बीच संघर्ष ने युद्ध का रूप धारण कर लिया था। अतः गांधी जी ने लोगों की इस वृत्ति को देखते हुए देश को हिंसा से बचाने के लिए असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया। सभी कार्यकत्ताओं की तरह यशपाल पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ा। इसीलिए उन्होंने गांधी जी का साथ छोड़ दिया और अपनी माँ की इच्छा के विरूद्ध नेशनल कालेज में अपना दाखिला करवा दिया। यशपाल यह जानते थे कि यदि वे अपना दाखिला सरकारी कालेज में कराते तो उन्हें वजीफा मिलता लेकिन नेशनल कालेज में नहीं मिलेगा। परन्तु राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत होने के कारण उन्होंने अपना प्रवेश नेशनल कालेज में कराया। वे यह भी जानते थे कि यहाँ पढ़ने से सरकारी नौकरी भी नहीं मिलेगी। यहीं इनका परिचय भगत सिंह, सुखदेव, भगवतीचरण बोहरा आदि देशभक्तों से हुआ जो क्रांति का प्रचार कर रहे थे। इसी समय उन्होंने देश के लिए पूर्ण समर्पण की प्रतिज्ञा भगतसिंह के सामने की। प्रो. जयचन्द्र विद्यालंकार उनके लिए क्रांति के पथ–प्रदर्शक बनें और उदयशंकर भट्ट साहित्य के। यशपाल की पहली कहानी 'भ्रमर' पत्रिका में प्रकाशित हुई। इस प्रकाशन से वे प्रोत्साहित हुए और 'प्रताप' तथा 'प्रभा' में अंकित अपनी छोटी–छोटी रचनाएं भेजने लगे। जो कभी लौटाया नहीं गया। इन्हीं दिनों यशपाल ने अंग्रेजों के नीति का दिग्दर्शन कराने के लिए 'कृष्ण विजय' नाटक खेला था। मधुरेश ने भी लिखा है –

"नेशनल कालेज के अध्यापक तथा प्रसिद्ध कवि और लेखक श्री उदयशंकर भट्ट के प्रोत्साहन से पहली कहानी बरेली से प्रकाशित पत्रिका 'भ्रमर' में छपी, शायद 1924 में।"[7]

'नौजवान भारत सभा' द्वारा साइमन कमीशन का निषेध किया गया। इस निषेध प्रदर्शन में लाला लाजपतराय शहीद हो गयें। उन दिनों ये नौजवानों के प्रेरणास्रोत थे। लाला जी के हत्या का बदला लेने के लिए क्रांतिकारियों ने साण्डर्स की हत्या कर दी। यशपाल ने 'नौजवान भारत सभा' के बारे में लिखा है –

"यद्यपि 'नौजवान भारत सभा' साम्प्रदायिक एकता को राजनैतिक कार्यक्रम का बहुत महत्वपूर्ण अंग समझती थी किन्तु कांग्रेस के कार्यक्रम की तरह सभी साम्प्रदायिक धारणाओं को फुसलाना नहीं था। अर्थात् हम लोग अल्ला–हो–अकबर, सत श्री अकाल और हर हर महादेव के नारे नहीं लगाते थे। हमारे तीन नारे थे इंकलाब जिन्दाबाद, वन्दे मातरम् और

हिन्दुस्तान जिन्दाबाद।"[8]

'नौजवान भारत सभा' का गठन गांधीवादी नीतियों से मोहभंग होने के बाद भगत सिंह, सुखदेव, भगवतीचरण बोहरा आदि के नेतृत्व में हुआ। कुछ लोग पहले से ही 'हिन्दुस्तानी प्रजातंत्र दल' (एच.आर.ए.) के नाम से गुप्त रूप में क्रांतिकारी गतिविधियां शुरू कर दी थी। बाद में 'हिन्दुस्तानी प्रजातंत्र दल का नाम' 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ' (हिसप्रस) रखा गया। यशपाल नेशनल कालेज में अध्यापक होने के बावजूद इसका काम सम्भालते थे। क्रांति के मार्ग पर चलना और नौकरी करना एक साथ सम्भव नहीं था, अतः यशपाल ने नौकरी छोड़कर 1926 के आस–पास क्रांतिकारी दल में पूरी तरह सम्मिलित हो गये और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का विरोध करना अपना लक्ष्य मान लिये।

भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त ने जनता को जगाने तथा 'सार्वजनिक सुरक्षा' एवं 'औद्योगिक विवाद' बिलों के विरोध में 1929 में असेम्बली में बम विस्फोट किया। इसमें दोनों लोग जानबुझकर गिरफ्तार हुए ताकि जनता को क्रांतिकारी दल के बारे में सही जानकारी दे सकें। इसमें उन्होंने 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र संघ' की तरफ से परचा बाटा तथा बाद में बयान देते हुए क्रांति के अर्थ को बताया। यशपाल इन दिनों लाहौर बम फैक्ट्री में बम बना रहे थे। यहीं से क्रांतिकारी कार्यों में इनका सक्रिय सहयोग आरम्भ हुआ। खुफिया पुलिस ने इस फैक्ट्री का पता लगा लिया। सुखदेव पुलिस की पकड़ में आ गये लेकिन यशपाल बच गये क्योंकि उस समय यशपाल फैक्ट्री में नहीं थे। यहीं 'सिंहावलोकन' का प्रथम भाग समाप्त होता है। इस भाग में यशपाल से अधिक उनके साथियों की चर्चा है।

'सिंहावलोकन' का दूसरा भाग 1952 में प्रकाशित हुआ। इसमें दल के जिन सूत्रों की खोज के लिए यशपाल ने जो प्रयास किया उसका वर्णन है। साथ ही बम बनाने के तरीकों की खोज के लिए कश्मीर यात्रा का वृतान्त, दिल्ली तथा रोहतक में बम बनाने की कला, बाइसराय के ट्रेन को उड़ाने, गांधी के 'कल्ट ऑफ दी बम' के विरोध में 'फिलास्फी ऑफ दी बम' घोषणा पत्र निकालने, भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त को जेल से निकालने की योजना, भगवती भाई की शहादत, यशपाल को प्राण्उदण्ड तथा दल में फूट पड़ने और दल भंग के रोमांचक प्रसंग इस भाग में हैं। 'सिंहावलोकन' भाग दो का आरम्भ कांगड़ा के प्रकृति–सौन्दर्य के चित्रण से हुआ है।

साण्डर्स बध, असेम्बली बम काण्ड तथा लाहौर में बम फैक्ट्री पकड़ी जाने की घटनाएं एक के बाद एक घट चुकी थी। इसीलिए जगह–जगह क्रांतिकारियों की गिरफ्तारियां भी हो रही थीं। सुखदेव गिरफ्तार हो चुके थे। यशपाल दल के छिन्न सूत्रों की खोज के लिए वेश बदलकर शकुन्तला को लेकर सुखदेव से जेल में मिलने गये।

अंग्रेजी शासन को उसके क्रूर शासन के प्रति चुनौती देना साधारण साहस का कार्य न था परन्तु यशपाल लायलपुर जेल में वकील बनकर सुखदेव से मिले। सहारनपुर बम फैक्ट्री भी पकड़ी गयी और इसमें शिव वर्मा, जयदेव गिरफ्तार हो गये फिर भी यशपाल बम के नये नुख्से खोजने के लिए कश्मीर गये। वहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य और आर्थिक स्थिति का चित्रण 'सिंहावलोकन' भाग दो में हुआ है। देवदत्त शर्मा से बम बनाने का मार्गदर्शन प्राप्त कर यशपाल वापस आ गये और अपने मन में वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट करने की योजना तैयार की। इस कार्य में उन्होंने इन्द्रपाल से सहयोग लेने का विचार बनाया। रोहतक में यशपाल ने अपने पुराने परिचित लेखाराम वैद्य के यहां बम बनाने का निश्चय किया। पुलिस से बचने के लिये, काम–धाम, वेश–भूषा यहां तक कि भाषा भी बदलकर वे लेखाराम के यहाँ नौकर बनकर बम बनाने लगे। यहाँ उन्होंने अपना नाम किसना रखा था। एक दिन यशपाल अखबार पढ़ रहे थे तो लेखाराम का छोटा भाई देखकर बोला –

"वाह ! किसना अखबार पढ़ रहा है, किन्तु किसना तुरन्त छपे हुए एक चित्र को देखकर कहता है – 'जे महातिमा गांधी भैया'।"[4]

पुलिस की आशंका होते ही सब सामान लेकर वे दिल्ली लौट आए। बम तो तैयार नहीं हो पाया था कितु मसाला बन गया था। दिल्ली में आकर बम बनाये गये।

यशपाल क्रांतिकारी दल के आर्थिक सहायता के लिए सावरकर बन्धु के पास गये परन्तु उन्होंने यशपाल के सामने प्रस्ताव रखा कि जिन्ना की हत्या कर दो तो पचास हजार की सहायता दूंगा। यशपाल ने इंकार करते हुए कहा –

"साम्प्रदायिक मतभेद से हत्या करना हमारा उद्देश्य नहीं।"[10]

'सूत्रों के विस्तार' शीर्षक में यशपाल ने बताया हे कि "हिन्दू–मुसलमान की आपसी घृणा में पहल हिन्दू ने की। अश्पृश्यता का आधार साम्प्रदायिकता या धार्मिक विश्वास नहीं बल्कि श्रेणियों का आर्थिक विभाजन था। ... जिस वर्ग का जितना अप्रिय और कठिन कार्य करना पड़ता था वह वर्ग उतना ही अधिक हीन और अस्पृश्य समझा जाता था।"[11]

बम तैयार करने के बाद यशपाल ने वायसराय के ट्रेन को उड़ाने की योजना बनाई। दल ने इस योजना का विरोध किया फिर भी यशपाल ने वायसराय के ट्रेन के नीचे विस्फोट कर दिया। परन्तु वायसराय बच गया, इस संदर्भ में यशपाल ने लिखा है –

"वायसराय गाड़ी से उतर कर अपने महल में जाने से पहले अपनी प्राण रक्षा के लिए भगवान को धन्यवाद देने के लिए गिरजाघर पहुंचा था।"[12]

यशपाल वायसराय की गाड़ी उड़ा देने के बाद फरार हो गये। गांधी जी ने इस कार्य की खूब निंदा की तथा इसके विरोध में अपने साप्ताहिक पत्र 'यंग इण्डिया' के एक लेख

'बम का मार्ग' (cult of the Bomb) प्रकाशित किया। इस लेख का उत्तर देने के लिए तथा जनता के सम्मुख दल का दृष्टिकोण रखने के लिए क्रांतिकारियों ने आजाद की ओर से अंग्रेजी में 'बम का दर्शन' (Philosophy of the Bomb) प्रकाशित किया। यह घोषणा गांधी जी की नीतियों की आलोचना करने के लिए, दल पर लगाये गये आरोपों का खण्डन करने के लिए, क्रांति की अवधारणा को पुष्ट करने के लिए तथा साथ ही बम बनाने की आवश्यकता के प्रतिपादन करने के लिए की गयी थी। इस घोषण पत्र को भगवतीचरण बोहरा ने लिखा था। मधुरेश ने 'बम का दर्शन' घोषणा पत्र में यशपाल की भूमिका स्वीकार करते हुए लिखा है –

"1930 में भगवती के साथ मिलकर 'हिसप्रस' के घोषणा पत्र 'Philosophy of the Bomb' का लेखन किया।"[13]

यशपाल पर दल की ओर से कई आरोप लगाये गये और उन्हें प्राणदण्ड की सजा दी गयी। उनपर लगाये गए आरोप निम्न थे – (1) दल के पैसे से विलासी जीवन बिताना; (2) दुर्गाभाभी तथा सुशीला दीदी के साथ छेड़खानी करना; (3) भगवती भाई की हत्या; (4) दल के साथ विश्वासघात; (5) दल की अनुमति के बिना प्रकाशवती को अपने साथ विवाह करने के लिए भगाना; (6) प्रकाशवती के पैसे से अपना खर्च चलाना आदि। इन सभी आरोपों को यशपाल ने आजाद के समक्ष खुलासा किया। इधर इन्द्रपाल अपने अनुसार कार्य करना आरम्भ कर दिया और अपना अलग संगठन बना लिया जिसका नाम 'आतिशीचक्कर' (अग्निचक्कर) रखा। दल में फूट पड़ जाने के कारण आजाद ने दल को भंग कर दिया और कहा –

"सोहन, इस समय और कुछ नहीं हो सकता। यह तो निश्चय है हम जान बचाने के लिए पान–बीड़ी की दुकान खोलकर दिन नहीं काटेंगे। तुम जब भी कुछ करने की बात सोचो मेरा भरोसा करना।"[14]

'सिंहावलोकन' के दूसरे भाग में यशपाल की कार्यकुशलता तथा कुशाग्र बुद्धि का परिचय मिलता है।

'सिंहावलोकन' भाग तीन का प्रकाशन 1955 में हुआ। इस भाग में दल की एकता एवं रक्षा के लिए आजाद ने जो परिश्रम किया, उसका चित्रण है। शालिग्राम, इन्द्रपाल तथा आजाद के बलिदान का चित्रण इसी भाग में है। इसके साथ ही भगत सिंह, सुखदेव तथा राजगुरु की फांसी का सजीव चित्रण है। इसी भाग में यशपाल ने हिन्दू–मुस्लिम दंगों का वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है कि गणेशशंकर विद्यार्थी हिन्दू बस्ती में फंसे मुसलमानों की रक्षा के लिए गये थे परन्तु साम्प्रदायिकता में अंधे मुसलमानों ने उनके शरीर में 'छूरा भोंककर उन्हें मार डाला।

'सिंहावलोकन' के दूसरे भाग में यशपाल ने गांधी जी पर व्यंग्य प्रहार किया है। उन्होंने लिखा है कि गांधी जी को देश में शराब निषेध, भगत सिंह, सुखदेव तथा राजगुरु को फांसी से बचाने से अधिक महत्वपूर्ण लग रहा था। इसीलिए ये 'गांधी इर्विन समझौता' में शराब निषेध का प्रस्ताव रखा किन्तु इन लोगों को फांसी से बचाने का प्रस्ताव नहीं रखा। जबकि वे इस प्रस्ताव को रख सकते थे। अन्ततः भगत सिंह, सुखदेव तथा राजगुरु को फांसी लगा दी गयी और ये मानवीय अधिकारों को पाने का कर्तव्य पूरा करने के लिए शहीद हो गये।

आजाद अल्फ्रेड पार्क में शहीद हो गये। अल्फ्रेड पार्क में आजाद के हाने की सूचना किसने दी ? इसको लेकर क्रांतिकारियों में विवाद रहा। आजाद के शहीद होने के बाद दल का पुनः गठन हुआ और इनके कमाण्डर इन चीफ यशपाल नियुक्त हुए। इन्हें पकड़ने के लिए अखबारों में इश्तिहार निकाले गए थे।

यशपाल ने दल का नेतृत्व पूरी जिम्मेदारी से किया। उन्होंने हि.स.प्र.स. की ओर से जो घोषणा पत्र निकाला उस पर हस्ताक्षर अपने असली नाम से किया। उन्होंने यह स्वीकार किया है कि "इसमें मेरा अहंकार और प्रसिद्धि प्राप्त करने की महत्वाकांक्षा छिपी थी।"[15]

यशपाल ने गिरफ्तारी के समय लड़ते हुए मरने तथा फांसी से मरने की बात सोचा लेकिन 'आजाद की तरह आखिरी गोली स्वयं कनपटी पर मार लेने का विचार नहीं किया। शायद इतना साहस नहीं था।"16 यशपाल क्रांतिकारी दल के कार्य के संबंध में रूस जाना चाहते थे। इसके लिए आर्थिक सहायता के लिए वे पं. जवाहरलाल नेहरू के पास गये। पंडित नेहरू तैयार भी हो गये। इसी बीच यशपाल गिरफ्तार हो गये। उन दिनों वे सावित्री देवी के मकान में थे। पुलिस ने वहाँ छापा मार दिया। गोलियां दोनों तरफ से चली और अन्त में यशपाल की गोलियां खत्म हो गई इस कारण वे गिरफ्तार हो गये। पुलिस के दल पर गोली चलाने, बिना लाइसेन्स हथियार रखने आदि आरोप लगाकर यशपाल पर मुकदमा चलाया गया जिसमें 14 वर्ष के कारावास की सजा दी गई। इसी समय दिल्ली में प्रकाशवती भी गिरफ्तार हो गई। प्रकाशचन्द्र मिश्र ने लिखा है –

"इस लम्बी अवधि के जेल जीवन में अध्ययन–मनन का पूरा अवसर मिला। बंग्ला, फ्रेंच, इतालवी आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया।"[17]

अध्ययन के साथ ही यशपाल के व्यक्तित्व का एक वैशिष्ट्य सामने आया प्रकाशवती के प्रति उनके प्रेम का। जेल में यशपाल को यह चिन्ता सताने लगी कि मेरे कारण प्रकाश का जीवन बर्वाद नहीं होना चाहिए। "मुझे सह न्याय और कर्त्तव्य जान पड़ा कि मैं अपनी

ओर से उन्हें ऐसे बंधन से मुक्त कर दूं ... मेरी स्मृति मात्र ही उनके जीवन की बाधा क्यों बने।"[18]

इसलिए उन्होंने प्रकाशवती को पत्र से सूचित किया कि वह केवल भावना में बंधी न रहकर अपने जीवन को नयी परिस्थितियों के अनुसार ढालनें का प्रयत्न करें। प्रकाशवती ने संकेत को समझकर तुरन्त बरेली सेन्ट्रल जेल में विवाह का प्रस्ताव रखा। 1936 में इनका विवाह जेल में ही हुआ। यशपाल ने अपने जेल जीवन के चित्रण में कांग्रेस पर व्यंग्य किया है। यह व्यंग्य 'जेल में' शीर्षक में देखा जा सकता है –

"समाज में भिन्न–भिन्न लोगों के सम्मान की धारणायें भिन्न–भिन्न हैं। जहां सुविमल बाबू अपने परिवार की लड़की के बेपर्दा न होने के लिए जेल में सजा काट रहा था। वहीं दूसरी ओर देश के बहुत बड़े नेता नेहरू की बहिन और पत्नी डंके की चोट पर जेल जा रही थीं।"[19]

इस प्रकार यशपाल ने तत्कालीन सामाजिक जीवन में व्याप्त विषमता का चित्रण किया है।

यशपाल 1938 में रिहा हो गये, परन्तु उनके लिए पंजाब–प्रवेश निषेध कर दिया गया। जेल से निकलने के बाद उन्होंने कलम और कागज के साथ मैत्री स्थापित कर ली। लोगों ने जब उनसे पूछा कि – "राजनीति से सम्पर्क छोड़ दिया तो उन्होंने जवाब दिया राजनीति से सम्पर्क छोड़ देने का मतलब अपने देश और समाज की वर्तमान अवस्था और भविष्य से कोई सम्पर्क न रखना है। ऐसा वैरागी मैं नहीं हूँ। जेल से छूटने के बाद से मेरे विद्यार्थी जीवन की और जेल में दुबारा पोसी हुयी भावना फिर जाग उठी थी। निश्चय कर लिया था, मुझे जो कुछ भी करना है, साहित्य के साधन से ही करूंगा।"[20]

यहीं 'सिंहावलोकन' का तृतीय भाग समाप्त हो जाता है। पारिवारिक स्थिति, गुरुकुल जीवन, पहली कमाई, नेशनल कालेज, हि.स.प्र.स. का क्रांतिकार्य, बम बनाना, वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट, गिरफ्तारी, जेल–जीवन तथा जेल–जीवन में ऐतिहासिक विवाह तथा रिहाई आदि के संस्मरणों को यशपाल ने 'सिंहावलोकन' के तीन भागों में प्रस्तुत किया है, किन्तु इसमें उनके साहित्यकार जीवन का चित्रण नगण्य है।

(ख) यशपाल का शेष जीवन

मनुष्य का व्यक्तित्व उसके जीवन का अभिन्न पक्ष है जिसमें से किसी एक पक्ष का अध्ययन दूसरे पक्ष के अध्ययन के अभाव में अधूरा सा रह जाता है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में अपने जीवन के व्यक्तित्व के केवल एक पक्ष को प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने लेखक जीवन का चित्रण नहीं किया जबकि इनके जीवन का अधिकांश

समय लेखक के रूप में बीता। 1938 ई. से आजीवन वे लेखन कार्य करते रहे। इसीलिए यह आत्मकथा अधूरी लगती है। शायद वे चौथा भाग लिखते तो अपने साहित्यिक जीवन के संघर्ष को चित्रित करते।

यशपाल के जीवन में एक दूसरे से सम्बद्ध कई पड़ाव आये। बचपन की संवेदनाओं ने उन्हें क्रांतिकारी बनाया और क्रांतिकारी जीवन के अनुभवों ने उन्हें लेखक बनया। इन्होंने राजनीति, साहित्य तथा पत्रकारिता आदि सभी क्षेत्रों में क्रांति की। रामचन्द्र तिवारी ने लिखा है –

"यशपाल ने अपनी अनुभूतियों और विचारों को पूरी निष्ठा से अपनी कृतियों में व्यक्त किया है।"[21]

यशपाल 1938 में जेल से रिहा हो गये किन्तु पंजाब उनके लिये निषेध कर दिया गया। अतः वे लाहौर न जाकर लखनऊ में बस गये। यहीं से उनके जीवन का नया अध्याय शुरू होता है अर्थात् साहित्यिक जीवन शुरू होता है। वे शस्त्र छोड़कर साहित्य के माध्यम से देश से राजनीति और सामाजिक चेतना को जागृत करने के लिए प्रयत्नशील हुए। अपने गृहस्थ जीवन की जीविका चलाने के लिए यशपाल नौकरी की तलाश करने लगे। बड़ी तलाश के बाद उन्हें 'कर्मयोगी' साप्ताहिक पत्र में उपसम्पादक की नौकरी मिली परन्तु उन्होंने यह नौकरी अधिक समय तक नहीं की तथा स्तन्त्र रूप से पत्र निकालने का विचार किया। अन्ततः उन्होंने 'विप्लव' मासिक पत्रिका निकालना आरम्भ किया। यशपाल ने अपने एक लेख में लिखा है –

"जेल से रिहा होने पर मेरे सामने जीविका का प्रश्न आया। मैंने जीवन की इच्छा या जीवन के लिए प्रयत्न की इच्छा को अभिव्यक्ति देने के कार्य को ही जीविका बना लेने के लिए 'विप्लव' नाम से एक पत्रिका आरम्भ कर दी।"[22]

यशपाल 'विप्लव' के माध्यम से जनक्रांति का आह्वान करते थे। इसके प्रकाशन में प्रकाशवती का बहुत हाथ है। यह पत्रिका एक साल में इतनी अधिक लोकप्रिय हो गई कि इसका उर्दू संस्करण भी निकलने लगा। उर्दू संस्करण का नाम 'बागी' था। यशपाल 'विप्लव' के माध्यम से क्रांतिकारी विचारों का प्रचार–प्रसार करना चाहते थे तथा जनता में क्रांतिकारी चेतना विकसित करना चाहते थे। इसके लिए वे इस पत्रिका में अपने कई लेख अलग–अलग नामों से प्रकाशित करते थे। सरकार उनके लेखों से असंतुष्ट होकर पुनः उन्हें गिरफ्तार कर लिया और उनसे बारह हजार रुपये की जमानत मांगी गयी। जमानत न देने पर पत्रों को बन्द कर देने का आदेश दिया गया। रुपया इकट्ठा न होने के कारण उन्होंने पत्र बन्द कर देना स्वीकार कर लिया। केस से छूटने के बाद उन्होंने पुनः 'विप्लव

ट्रैक्ट' नाम से पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। परन्तु कुछ समय बाद इसे भी बन्द करना पड़ा। प्रकाशचन्द्र मिश्र ने लिखा है –

"प्रेमचन्द को अपने हंस के लिए कितना संघर्ष करना पड़ा। यह कहने की आवश्यकता नहीं। यशपाल को ऐसे ही संघर्षों से जूझना पड़ा। अंग्रेज सरकार द्वारा लगाये गये अनेक प्रतिबंधों के बावजूद संघर्ष करते हुए वे प्रेमचन्द की भांति अपने क्षेत्र में सक्रिय रहे। उन्हें अनेक बार अपने पत्र के लिए जमानत भरनी पड़ी, परन्तु उनका उत्साह कभी भी शिथिल नहीं हुआ। यशपाल ने प्रेमचन्द की इसी आस्था, विश्वास और साहस को विरासत के रूप में पाया था।"[23]

इस समय तक यशपाल को लोग लेखक के रूप में नहीं जानते थे वरन् क्रांतिकारी देशभक्त के रूप में जानते थे। यशपाल के पत्रकार व्यक्तित्व ने तत्कालीन राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन, किसान, मजदूर आन्दोलन, सांस्कृतिक आन्दोलन, भाषा आन्दोलन तथा साहित्यिक आन्दोलन जैसे विभिन्न आन्दोलनों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 'विप्लव' के माध्यम से वे जनता में राष्ट्रीय क्रांतिकारी चेतना का विकास करना चाहते थे। साथ ही इसी पत्र के माध्यम से धन कमाकर वे प्रतिष्ठित जीवन भी बिताना चाहते थे। यशपाल 1947 से 1948 तक 'रक्ताभ' पत्रिका के सम्पादक रहे। 'उत्कर्ष' के सम्पादन में भी उन्होंने सहयोग दिया तथा 1967 के 'उत्कर्ष' के कहानी विशेषांक का सम्पादन किया।

यशपाल ने रिहा होने के बाद जेल जीवन में लिखी कहानियों को 'पिंजरे की उड़ान' नामक कहानी संग्रह में प्रकाशित किया। यह 1939 में प्रकाशित हुआ। यह इनका पहला कहानी संग्रह है। इसके बाद तो 1975 तक वे कहानी, उपन्यास, निबन्ध, यात्रा–साहित्य, आत्मकथा आदि गद्य विधाओं से हिन्दी गद्य साहित्य को समृद्ध करते रहे। यशपाल ने उपन्यास के क्षेत्र में पहला कदम 1941 में रखा। इनका पहला उपन्यास 'दादा कामरेड' है। इसके बाद यशपाल की लेखनी निरन्तर चलती रही और 'मेरी तेरी उसकी बात' तक ग्यारह उपन्यासों का सृजन हुआ। कुंवरनारायण ने लिखा है –

"यशपाल का मार्क्सवादी होना या बड़ा लेखक होना या आयु में बड़ा होना किसी भी तरह दूसरों को छोटा नहीं करता।"[24]

'झूठा–सच' उपन्यास विश्व–साहित्य में चर्चित है। 'मेरी तेरी उनकी बात' के लिए उन्हें 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार मिला। परन्तु यह पुरस्कार उनकी मृत्यु के बाद मिला। यशपाल ने अपने जीवन काल में कई बार विदेश–यात्रा की। यात्रा के आधार पर उन्होंने यात्रा–साहित्य लिखा। उनका यात्रा–साहित्य विवरण मात्र नहीं है। यात्रा–साहित्य के माध्यम से यशपाल ने समाज और राजनीति के विविध दृश्यों तथा प्रसंगों पर टिप्पणी की

है। यशपाल ने क्रांतिकारी जीवन के साथ साहित्यिक जीवन में भी समाजवादी विचारधारा को स्पष्ट किया जा सकता है। साहित्य में उन्हें जहां भी मौका मिला है 'मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण' का उन्होंने डटकर विरोध किया है। मैनेजर पाण्डेय ने यशपाल को मार्क्सवादी कथाकार कहा है –

"यशपाल हिन्दी के मार्क्सवादी कथाकार के रूप में विख्यात हैं। प्रेमचन्द के बाद की पीढ़ी के जिन कथाकारों ने अपने कथा लेखन की नई कथाभूमि और नई कथा दृष्टि का विकास करते हुए हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास निर्मित किया है उसमें यशपाल का विशेष महत्त्व है। ... वे केवल मार्क्सवादी कथाकार ही नहीं मार्क्सवादी दृष्टि के पत्रकार और विचारक भी हैं।"[25]

यशपाल कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य नहीं थे परन्तु उनके विचारों एवं नीतियों के प्रति सजग थे। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य इसलिए नहीं बनें ताकि वे जरूरत पड़ने पर उसकी नीतियों की आलोचना स्वतंत्र रूप से कर सकें। वे मानवता को धर्म मानते थे। ईश्वर में उनका विश्वास कभी नहीं रहा। अन्धविश्वास, रूढ़ियों का विरोध उन्होंने आजीवन किया। मधुरेश का मत है –

"अंधविश्वास और रूढ़िवाद के विरूद्ध यशपाल का वैचारिक संघर्ष आज शायद और अधिक प्रासंगिक है।"[26] 'मार्क्सवाद', 'गांधीवाद की शव परीक्षा', 'रामराज्य की कथा', 'बात–बात में बात', 'न्याय का संघर्ष' आदि उनकी वैचारिक टिप्पणियों का संग्रह है। यशपाल का साहित्यिक व्यक्तित्व हमेशा जनसाधारण का प्रतिनिधित्व करता रहा। इसीलिए वे प्रेमचन्द के उत्तराधिकारी माने जाते हैं। यशपाल पर आरोप लगाया जाता है कि वे शोषितों के पक्षधर होकर भी पाश्चात्य ढ़ंग की विलासितापूर्ण जिन्दगी जीते थे। लेकिन यह ध्यान रखने वाली बात है कि उन्होंने जो भी सुख–सुविधा के साधन उपलब्ध किये वे सब अपने लेखन एवं स्वावलम्बन के माध्यम से किये हैं किसी सरकारी नौकरी या भ्रष्टाचार की शरण में आकर नहीं। प्रकाशचन्द्र मिश्र ने लिखा है –

"यशपाल पूर्ण स्वतन्त्र, स्पष्ट और आधुनिक व्यक्ति थे। आधुनिक वे विचारों से ही नहीं रहन–सहन आदि में भी वे उतने ही आधुनिक थे। साहित्यकार के किसी खास अन्दाज के वे किसी मायने में प्रतिनिधि नहीं कहे जा सकते।"[27]

यशपाल विचारहीन साहित्य को साहित्य नहीं मानते क्योंकि साहित्य विचारहीन नहीं होता। कोई न कोई विचार तो उसमें होता ही है।

लखनऊ में यशपाल का निवास स्थान 'प्रगतिशील लेखक संघ' की बैठक का केन्द्र था। सरकार के डर से इसका नाम 'लखनऊ लेखक संघ' कर दिया गया था। इस संदर्भ

में यशपाल का मानना था कि नाम बदलने से काम में कोई फर्क नहीं पड़ता, काम तो वही होगा जो हो रहा था। परन्तु यह आन्दोलन 1950 के बाद मन्द पड़ने लगा। 1975 में लखनऊ में युवा लेखकों ने पुनः इस संघ को गठित किया जिसकी अध्यक्षता यशपाल ने की। राजीव सक्सेना ने लिखा है –

"प्रगतिशील लेखक संघ की किसी बैठक में वे शामिल न होते तो हर लेखक समझ लेता कि वे या तो अस्वस्थ हैं, या शहर से बाहर।"[28]

यशपाल अपने काम को पूरी जिम्मेदारी से निभाते थे। उनके जीवन में प्रकाशवती का महत्त्वपूर्ण स्थान था। वे उनके हर काम में, अच्छे और बुरे समय में भी साथ थीं। यशपाल ने स्वयं लिखा है –

"मैंने और रानी ने मिलकर अपने नगण्य साधनों के बल पर हस्तकला को स्वीकाल किया। ... हम दोनों ने मिट्टी और कागज के खिलौने बनाए ... जूतों पर लगने वाली पॉलिश बनायी तथा बेची। "[29]

यशपाल के क्रांतिकारी जीवन का योगदान तो महत्त्वपूर्ण है ही साथ ही उनके साहित्यिक जीवन के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाएं निम्न हैं –

कहानियाँ

पिंजरे की उड़ान (1939), वो दुनिया (1942), ज्ञानदान (1943), अभिशप्त (1944), तर्क का तुफान (1946), भस्मावृत्त चिनगारी (1946), फूलों का कुर्ता (1950), धर्मयुद्ध (1950), उत्तराधिकारी (1951), चित्र का शीर्षक (1951), तुमने क्यों कहा था, मैं सुन्दर हूँ (1954), उत्तमी की माँ (1955), ओ भैरवी (1958), सच बोलने की भूल (1962), खच्चर और आदमी (1964), भूख के तीन दिन (1968)।

उपन्यास

दादा कामरेड (1941), देशद्रोही (1943), दिव्या (1945), पार्टी कामरेड (1946), मनुष्य के रूप (1949), अमिता (1956), झूठा सच(1) (1958), झूठा सच(2) (1960), बारह घण्टे (1963), अप्सरा का श्राप (1965), क्यों फँसे (1968), तेरी मेरी उसकी बात (1974)।

निबन्ध

न्याय का संघर्ष (1940), मार्क्सवाद (1940), गांधीवाद की शव परीक्षा (1942), बात–बात में बात (1950), देखा ! सोचा ! समझा ! (1951), चक्कर क्लब।

आत्मकथा

सिंहावलोकन (प्रथम भाग) (1951), सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) (1952), सिंहावलोकन (तृतीय भाग) (1955)।

यात्रा साहित्य

लोहे की दीवार के दोनों ओर (1953), राहबीती (1958), स्वर्गोधान बिना सांप (1975)।

नाटक

नशे–नशे की बात (1952)

अनुवाद

डिसाइसिव स्टेप (रूसी) का अनुवाद 'पक्का कदम' (1949), पैवेलियन आफ विमेन (अमरीकी) का अनुवाद 'जनानी ड्योढ़ी' (1955), नेक्टर इन द सीव (अंग्रेजी) का अनुवाद चलनी में अमृत (1956), हार्वेस्ट (रूसी) का अनुवाद फसल (1956), थ्री सिस्टर्स का अनुवाद जुलेखाँ (1960)।

इस प्रकार यशपाल अंतिम सांस तक रचना में रत रहें। इनका निधन 26 दिसम्बर 1976 में हो गया। दुर्गा देवी ने अपने एक लेख 'यशपाल : क्रांतिकारी का निर्माण' में लिखा है –

"यशपाल पर मुझे गर्व है। उनके प्रति मुझे सम्मान है और उनके कारण ही मैं जीवन के अपने संघर्षमय बोझ को सहज भाव से झेलती आयी हूँ। आज यशपाल का शारीरिक अन्त, उनकी भावना, बात में क्रांतिकारी और मार्मिक साहित्यकार के रूप में हमारे सम्मुख अमर हैं – सजीव हैं।"[30]

(ग) यशपाल के जीवन और चिन्तन में स्वाधीनता एवं क्रांतिकारी दल

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के समय जो क्रांतिकारी अंग्रेजों के खिलाफ शस्त्र उठा रहे थे और स्त्री–पुरुष समानाधिकार के पक्षधर थे। यशपाल उनमें अग्रणी थे। विदेशी शासन से मुक्ति की इच्छा से सम्बद्ध अनुभूतियों तथा स्मृतियों को कुरेदते हुए यशपाल पाते हैं कि उनके अन्दर आरम्भ से ही अंग्रेजों के प्रति घृणा और विरोध विद्यमान है। गुरुकुल में पढ़ते समय वे कल्पना करते हैं कि अंग्रेज ब्रह्मचारी बने घूम रहे हैं और मैं उसका अधिष्ठाता हूँ। गुरुकुल में बताया गया था कि विदेशी दासता से मुक्ति के बिना राष्ट्र की प्रगति नहीं हो सकती। गुरुकुल के वातावरण ने उनके व्यक्तित्व पर दोहरा प्रभाव डाला जहाँ एक ओर

कठोर अनुशासन के प्रति उनके मन में तीव्र प्रतिक्रिया पैदा हुई, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय भावनाएं और भी शक्तिशाली हुई। यशपाल ने साम्राज्यवादी शक्ति को उखाड़ फेंकने का स्वप्न देखा था। देश की आजादी के लिए जो लोग प्रयत्नशील थे उनके साथ यशपाल ने सक्रिय संबंध बनाया। यशपाल पहले गांधी जी के सम्पर्क में आये लेकिन बाद में उन्हें लगा कि कांग्रेस पार्टी गरीबों की जरूरतों के प्रति उदासीन है तो वे 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र संघ' में शामिल हो गये जो ब्रिटिश राज को उखाड़ फेंकने के लिए सशस्त्र क्रांति को सही समझती थी। यशपाल ने कांग्रेस से उबकर अपना दाखिला नेशनल कालेज में करवा लिया, जबकि वे जानते थे कि ऐसा करने से सरकारी नौकरी के लिए दरवाजे बन्द हो जायेंगे। नेशनल कालेज में उनके अध्ययन का कारण स्वाधीनता की भावना ही थी। उन्होंने जयचन्द्र विद्यालंकार से कहा भी –

"सरकारी नौकरी का सीधा अर्थ है अपनी जीविका के लिए विदेशी सरकार को सहयोग देना। मेरा निश्चय है कि मैं विदेशी सरकार को किसी भी प्रकार का सहयोग नहीं दूंगा क्योंकि मैं अपने देश में विदेशी शासन जमाये रखने के पक्ष में नहीं हूँ।"[31]

यशपाल सामाजिक क्रांति के समर्थक हैं। क्रांति से यशपाल का अभिप्राय केवल हिंसात्मक संघर्ष और उथल–पुथल ही नहीं है। उनके अनुसार –

"क्रांति का लक्ष्य एक नवीन न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना है। इस क्रांति का उद्देश्य पूंजीवाद को समाप्त करके श्रेणीहीन समाज की स्थापना करना और विदेशी तथा देशी शोषण से जनता को मुक्त कर आत्मनिर्णय द्वारा जीवन को अवसर देना है। इसका उपाय है शोषकों के हाथों से शासन शक्ति लेकर मजदूर तथा श्रम करने वालों के शासन की स्थापना करना है।"[32]

गांधी जी इस प्रकार के सामाजिक क्रांति को महत्त्व नहीं देते। गांधी जी इसमें हिंसा को दखते हैं। इसके विपरीत अहिंसा, सत्याग्रह गांधीवादी विचारधारा के प्रमुख अंग हैं। यशपाल मानते हैं कि स्वाधीनता के लिए केवल आत्मिक शक्ति के भरोसे न रहकर सभी सम्भव साधनों का उपयोग किया जाना चाहिये; जैसे – हिंसा, आतंक तथा अहिंसा तथा शांति आदि। यशपाल का मानना है कि जिस प्रकार व्यक्तिगत रूप से स्वाधीनता प्राप्ति के लिए किया गया प्रयत्न असफल होता है उसी प्रकार ईश्वरीय प्रेरणा के आधार पर किया गया प्रयत्न भी असफल होता है।

यशपाल का मानना है कि गोरों की जगह पर कालों के आ जाने मात्र से उत्पीड़ित भारतीय जनता की मुक्ति नहीं हो सकती। इसीलिए वे 'मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त' चाहते हैं (वह शोषण चाहे देशी हो या विदेशी) जिससे जनता को सच्ची मुक्ति मिले

और इसी सच्ची मुक्ति के लिए यशपाल गांधीवादी दर्शन का विरोध करते रहे। यशपाल ने अनशन, उपवास, सत्याग्रह, हृदय परिवर्तन आदि उपादानों से स्वाधीनता एवं समता की स्थापना की कल्पना को निरर्थक बताया हैं वैसे तो सभी राजनीतिक पार्टियों का लक्ष्य स्वाधीनता प्राप्ति ही था चाहे वह कांग्रेस हो या क्रांतिकारी दल अथवा साम्यवादी दल, किन्तु इन सबके रास्ते अलग–अलग थे। रास्तों की भिन्नता में कई बार ऐसा हो गया कि रास्तों को लक्ष्य की तुलना में अधिक महत्त्व प्राप्त हो गया और राष्ट्रीयता एवं स्वाधीनता का विचार कमजोर हो गया। यशपाल का विचार है कि व्यक्ति अपने निजी विचारों में भावुक, आध्यात्मिक हो सकता है किन्तु समाज के अंग होने के नाते उसे बुद्धि और विज्ञाननिष्ठ होना चाहिए।

यशपाल मात्र राजनीतिक स्वाधीनता नहीं चाहते थे बल्कि आर्थिक स्वाधीनता भी चाहते थे। इसीलिए आर्थिक शोषण के विरूद्ध उन्होंने आवाज उठाई। वे राजनीतिक तथा सामाजिक मुक्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। वे मानव–शोषण को समाप्त करना चाहते थे चाहे वह किसी भी प्रकार का शोषण हो। यशपाल मानव की पूर्ण स्वतन्त्रता को सर्वोपरि मानते थे और प्रत्येक मानव के आत्मसम्मान की प्रतिष्ठा और उसकी सर्वतोमुखी स्वतन्त्रता का अवसर देना चाहते थे। यशपाल का मत है कि गरीब व्यक्ति न अपने आत्मसम्मान की रक्षा कर सकता है और न वह अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रख सकता है। वे मानव के आत्मसम्मान और स्वतन्त्र जीवन की प्रतिष्ठा के लिए आर्थिक सम्पन्नता को अत्यन्त आवश्यक मानते थे। यशपाल गुरुकुल में जिस गरीबी की अनुभूति की थी। उन पर इस अनुभूति का प्रभाव बहुत ही गहरे रूप से पड़ा था। यशपाल ने हालैण्ड से निर्भिक होकर कहा –

"आप भी मानते हैं कि इस देश के 99 प्रतिशत आदमी भूखे, नंगे रहकर किस प्रकार निर्जीव और निरूत्साह हो रहे हैं और उन्हें अपनी अवस्था सुधारने का कोई अवसर नहीं। उनके प्रयत्नों पर आपके विदेशी शासन की गुलामी का शिकंजा कसा हुआ है। इस विदेशी शासन से मुक्ति के लिए ही हमारा यह प्रयत्न है।"[33]

यशपाल का विचार है कि सम्राज्यवाद का अन्त करके ही स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है। यशपाल मात्र विदेशी स्वाधीनता नहीं चाहते देशी शोषण से भी जनता को मुक्त करना चाहते हैं तथा आत्मनिर्णय द्वारा जीवन का अधिकार भी देना चाहते हैं। यशपाल मानते हैं कि यह क्रांति द्वारा ही सम्भव है। यशपाल ने स्वाधीनता का लक्ष्य सभी स्त्री–पुरुष को समान रूप से रोजगार एवं विकास करने तथा परिश्रम का पूरा फल पाने का अवसर प्रदान करना स्वीकार किया है।

महात्मा गांधी ने 'यंग इंडिया' में 'बम का मार्ग' नामक एक लेख लिखकर क्रांतिकारियों की निन्दा की। इसके जवाब में क्रांतिकारी दल की तरफ से भगवती चरण बोहरा तथा यशपाल ने मिलकर 'बम का दर्शन' घोषणा पत्र निकाला। गांधी जी ने देश की स्वाधीनता के लिए सर्वस्व बलिदान करने वाले क्रांतिकारियों को आतंकवादी और हत्यारा कहा। 'सिंहवालोकन' में यशपाल ने लिखा है –

"दस वर्ष से गांधी जी कांग्रेस और जनता को प्रेम और सद्भावना द्वारा विदेशी सरकार के हृदय परिवर्तन का उपदेश देते आ रहे हैं। गांधी जी देश की शत्रु विदेशी सरकार के प्रतिनिधियों को तो मित्र कहकर सम्बोधित करते हैं परन्तु देश की स्वतन्त्रता के लिए अपनी जान पर खेल जाने वाले क्रांतिकारियों को 'कायर' और उसके काम को जघन्य कहकर गालियां देते हैं।"[34]

यशपाल का मानना है कि क्रांतिकारियों का लक्ष्य रक्त बहाना नहीं बल्कि मनुष्य के शोषण का अन्त करना है। वे पूर्ण स्वाधीनता में विश्वास करते हैं। यशपाल ने लिखा है –

"कांग्रेस के होमरूल, स्वायत्त शासन, उत्तरदायी स्वायत्त शासन, पूर्ण उत्तरदायी शासन और औपनिवेशिक स्वराज्य की मांगे विदेशी दासता के ही नाम हैं। क्रांतिकारी इन्हें अपना लक्ष्य नहीं मानते। वे केवल पूर्ण स्वाधीनता में विश्वास रखते हैं और उसी के लिए बलिदान होते आये हैं।"[35]

गांधी जी जनता को 31 दिसम्बर 1921 तक स्वराज्य ले लेने का पूर्ण आश्वासन दिया था। परन्तु 1922 तक गांधी जी की प्रतिज्ञा पूर्ण न हुई। गांधी जी ने किसानों के संबंध में दो मुख्य बातों की निश्चित कर दिया था। एक लगानबन्दी का आन्दोलन कभी नहीं होना चाहिए और दूसरा भूमि के स्वामित्व की परम्परागत व्यवस्था में परिवर्तन जमीदारों की मिल्कीयत पर आंच नहीं आनी चाहिए। इसका अर्थ यह था कि किसान को अपने भाग्य का निर्णायक नहीं बनना चाहिए जबकि किसान आन्दोलन में किसान अपने भाग्य का निर्णायक स्वयं बनना चाहते थे। वह भूमि का पूरा स्वामी बनना चाहते थे। यशपाल इसके समर्थक थे। यशपाल का विचार है कि कांग्रेस की नीति गांधी जी के बताये मार्ग पर चल रही थी। गांधी जी स्वराज्य द्वारा किसानों के उद्धार के वायदे तो करते थे किन्तु स्वराज्य का कोई ढांचा नहीं बताते थे। इसलिए सामान्य जनता स्वराज्य प्राप्त करने का मतलब कभी समझ नहीं पायी थी। जनता जानना चाहती थी इस स्वराज्य का ढ़ांचा क्या है ? तो गांधी जी इस संबंध में भिन्न–भिन्न तथा अस्पष्ट मत देते थे। यशपाल ने स्वराज्य के बारे में गांधी जी की अस्पष्टता के तीन उदाहरण प्रस्तुत किये हैं – पहला उदाहरण 'पट्टाभि सीतारमैया' का कथन है दूसरा 'सुभाष चन्द्र बोस' का तथा तीसरा

पं. जवाहरलाल नेहरू का। 'सिंहवालोकन' में इन तीनों उदाहरण को यशपाल ने इस प्रकार व्यक्त किया है –

"कांग्रेस के इतिहास में उन्होंने (पट्टाभि सीतारमैया) ने लिखा है : "गांधी जी ने कभी स्वराज्य की व्याख्या नहीं की थी। जनता विदेशी शासन से संघर्ष करने के लिए उतावली थी। स्वराज्य कैसे और क्या होगा यह व्याख्या गांधी ने भी नहीं दी।" उस समय सुभाष चन्द्र बोस जैसे समझदार नेता तक परेशान थे। उन्होंने अपनी पुस्तक (Indiasn Struggle पृ. 68) में स्वीकार किया है : "गांधी जी क्या आशा रखते थे यह मैं समझ न सका। या तो वे रहस्य को समय से पूर्व प्रकट नहीं करना चाहते थे या वे स्वयं ही नहीं जानते थे कि वे सरकार को किस तरह से परास्त कर लेंगे।" स्वयं पंडित नेहरू ने अपनी आत्मकथा में पृ. 76 में लिखा है : "यह स्पष्ट है कि हमारे अधिकांश नेता स्वराज्य का मतलब विदेशी राज्य से स्वतन्त्रता नहीं समझते थे। गांधी जी स्वयं इस विषय पर भोले बने हुए थे और इस बात को स्पष्ट करने की आवश्यकता भी नहीं समझते थे।"[36]

अतः गांधी जी स्वयं इस विषय को न तो स्पष्ट करना चाहते थे और न ही इस बारे में विचार करने का बढावा किसी को देते थे। इसीलिए यशपाल में भी गांधीवाद से हटकर सशस्त्र क्रांति के माध्यम से देश को स्वतन्त्र ही नहीं पूर्णतः शोषण मुक्त करने का विचार पैदा हुआ और यह विचार निरन्तर दृढ़ होता गया। प्रदीप सक्सेना ने अपने लेख 'यशपाल और 'गांधीवाद' में लिखा है –

"अंग्रेजों को मार खदेड़ने की उनकी इच्छा मात्र अतिरेकवादी उत्साह या युवकोचित खिलवाड़ न थी, उसके साथ देश का प्रश्न पूरी मजबूती से लगा हुआ था। यशपाल ने भी शस्त्र प्रहार से साम्राज्यवादी शक्ति को उखाड़ फेंकने का स्वप्न देखा था।"[37]

यशपाल ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध स्वाधीनता के लिए किये गये संघर्ष को व्यापक सामाजिक राष्ट्रीय जीवन से जोड़कर समाज की वैचारिक साझेदारी के साथ उसे विकसित करने की इच्छा रखते थे।

यशपाल स्त्रियों को पूर्ण स्वाधीन करने की मांग करते हैं। इसके लिए उन्होंने स्त्रियों को शक्तिशाली होना आवयश्यक माना है। शक्तिशाली होने का अर्थ आर्थिक आत्मनिर्भरता के साथ सभी प्रकार के शोषण का अन्त करके आत्मनिर्णय का अधिकार स्त्री को प्राप्त होना है। क्रांतिकारी दल में स्त्रियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में दुर्गा भाभी के क्रांतिकारी कार्य के संबंध में लिखा है –

"सार्वजनिक आन्दोलन में सामने कभी न आने पर भी राजनैतिक कार्य और विशेषकर क्रांतिकारी गुप्त संगठन के प्रति उनका अनुराग गूंगे के गुड़ जैसा था, अर्थात्

मुंह से कुछ बोले बिना सब कुछ करने को तैयार रहती थी।"[38]

यशपाल व्यक्तिगत स्वाधीनता के पक्ष में तभी तक हैं जब तक उससे किसी दूसरे की स्वाधीनता बाधित न हो। जबकि लोग अपने स्वाधीनता के आगे लोगों की स्वाधीनता भूल जाते हैं। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में इस बात को लिखा है –

"व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की बात करते समय यह बात प्रायः भुला दी जाती है कि हमारी या आपकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता दूसरों के भावों और हित पर तो आघात नहीं कर रही। हमारा अस्तित्व समाज के बिना सम्भव नहीं तो हमारी व्यक्तिगत स्ततन्त्रता भी दूसरों के हित और सन्तोष से अवश्य सम्बद्ध होगी।"[39]

यशपाल सबको समान स्वतन्त्रता देने के लिए ऐसी व्यवस्था लाने का प्रयत्न करते हैं जिसमें राजनैतिक और सामाजिक दासता या आर्थिक शोषण असम्भव हो जाए अर्थात व्यक्ति सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि सभी प्रकार से स्वतन्त्र हो। कुंवरपाल ने अपने लेख 'समय लिखेगा हम सब का इतिहास' में लिखा है –

"यशपाल ने देश की स्वतन्त्रता के लिए जो त्याग और बलिदान किया वह अभूतपूर्व हैं हिन्दी के किसी लेखक ने यशपाल की तरह इतनी लम्बी जेल यातनायें नहीं सहीं। यही नहीं मजदूरों के हित में भी आवाज उठाई, रेलवे मजदूरों के समर्थन में जेल गये। कांग्रेस सरकार ने भी उनके 'विप्लव' को बंद कर दिया। लेकिन यशपाल सदैव अपने संघर्ष और उद्देश्य के प्रति समर्पित रहे।"[40]

(ii) क्रांतिकारी दल

'सिंहावलोकन' में यशपाल ने व्यक्तिगत जीवन के संस्मरणों के माध्यम से तत्कालीन राजनैतिक स्थितियों एवं भारतीय क्रांतिकारी दल की गतिविधियों का पूर्ण इतिहास सन्निहित किया है तथा गांधीवादी सिद्धान्तों के विरूद्ध सशस्त्र क्रांति से सम्बद्ध सिद्धान्तों और समर्पण का पूर्ण वैचारिक भूमि पर स्पष्टीकरण भी। यशपाल ने ईश्वरीय प्रेरणा पर आधृत गांधीवाद का विरोध कर समाजवादी विचारधारा की बुद्धि विज्ञाननिष्ठता के कारण प्रचार–प्रसार किया। यशपाल ने गांधी जी के हर बातों को अस्वीकार नहीं किया है उनकी केवल आध्यात्मिक दृष्टि को ही अस्वीकार किया है। गांधी जी ने समाज में व्याप्त शोषण, अंधविश्वास दम्भ आदि का जो विरोध किया है, यशपाल उनकी सराहना करते हैं। क्रांतिकारी व्यक्तित्व किसी एक मतवाद के घेरे में पूरा–पूरा नहीं बंध पाता। यशपाल का व्यक्तित्व भी कुछ ऐसा ही था। इसीलिए आर्यसमाज से कांग्रेसी आन्दोलन, इसके बाद क्रांतिकारी दल और इसके बाद साम्यवादी विचारधारा से जुड़े, परन्तु इन्होंने साम्यवाद को

भी आंख मूंदकर स्वीकार नहीं किया। गोपालकृष्ण शर्मा ने यशपाल के जीवन विकास के संबंध में लिखा है –

"यशपाल का जीवन परिवर्तन विचारों का संवाहक है। सर्वप्रथम वे आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। आर्य समाज की प्रगतिशील भूमिका से उन्होंने मानवतावादी चेतना प्राप्त की। युवावस्था में स्वाधीनता आन्दोलन में गांधीवाद से प्रभावित हुए। गांधीवाद से उन्हें स्वराज्य तथा राष्ट्रवदी संस्कार मिले। लेकिन ज्यों ज्यों स्वाधीनता का आन्दोलन तेज होता गया यशपाल क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े। उन्होंने साहस और जोखिम का रास्ता चुना। कालान्तर में उनका वैचारिक परिवर्तन हुआ। साम्यवादी और समाजवादी दर्शन के प्रति आस्था पैदा हुई।"[41]

यशपाल के जीचवन और चिन्तन में क्रांतिकारी दल की क्या स्थिति थी इसका स्पष्टीकरण 'सिंहावलोकन' के अध्ययन से हो जाता है। गांधी जी ने जब असहायोग आन्दोलन स्थगित कर दिया तो देश की स्वाधीनता के लिये प्राणों की बाजी लगाने वाले युवकों का गांधीवादी आन्दोलन से विश्वास हट गया। अब वे सशस्त्र क्रांति के लिए तैयार हो गये। यशपाल के शब्दों में –

"गांधीवादी कांग्रेसी आन्दोलन में भरोसा न कर सकना ही क्रांतिकारियों को सशस्त्र क्रांति के प्रयत्नों की ओर ले जा रहा था।"[42] 'हिन्दुस्तानी प्रजातन्त्र दल' नामक संगठन देश में पहले से ही क्रांति के गुप्त कार्य कर रहा था। इसके अतिरिक्त भगत सिंह, भगवतीचरण बोहरा आदि नवयुवकों ने जनता में उग्र राष्ट्रीय भावना जगाने के लिए 'नौजवान भारत सभा' नामक क्रांतिकारी दल का गठन किया। इन्हीं संगठनों में यशपाल और उनके साथियों ने क्रांतिकारी गतिविधियां आरम्भ की। 'नौजवान भारत सभा' क्रांति का प्रचार–प्रसार कर रही थी तथा रूढ़िवाद, साम्प्रदायिकता तथा अन्धविश्वास को दूर करना इसका मुख्य ध्येय था। इसका नारा था – 'इन्कलाब जिन्दाबाद, हिन्दुस्तान जिन्दाबाद'। इस सभा की गतिविधियों में उनकी व्यापक और सक्रिय हिस्सेदारी वस्तुतः गांधी और गांधीवाद से मोहभंग का ही एक अनिवार्य परिणाम था। इस सभा के लक्ष्यों को बताते हुए यशपाल ने लिखा है –

"नौजवान भारत सभा" का कार्यक्रम गांधीवादी कांग्रेस की समझौतावादी नीति की आलोचना करके जनता को क्रांतिकारी राजनैतिक कार्यक्रम की प्रेरणा देना और जनता में उस आन्दोलन के लिए सहानुभूति उत्पन्न करना था।"[43]

भारत में साइमन कमीश्न के आने पर 'नौजवान भारत सभा' द्वारा ही विरोध किया गया जिसमें लाला लाजपत राय शहीद हो गये। इसका बदला भगत सिंह और उनके साथियों ने साण्डर्स की हत्या करके लिया।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में क्रांतिकारी दल की स्थापना, इसका लक्ष्य, इसके कार्यों आदि का स्पष्ट चित्रण किया है तथा इसका भी स्पष्ट उल्लेख किया है कि यह दल कैसे टूट गया ? 1928 में दिल्ली के फिरोजशाह कोटला किले के खण्डहरों में क्रांतिकारी दल के सदस्य विशेषकर भगत सिंह और चन्द्रशेखर आजाद आदि मिले। बहुत बहस के बाद 'हिन्दुस्तानी प्रजातन्त्र दल' का नाम 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र संघ' रखा गया। इसी के सैनिक विभाग का नाम 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' रखा गया। इस सेना का बोध वाक्य 'मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त' माना गया। यशपाल ने भी इसी बोध वाक्य को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। 1931 में सेना ने जो घोषणापत्र निकाला वह यशपाल के नाम से था। इससे इस सेना में यशपाल के स्थान तथा पद का पता चलता है। यशपाल के जीवन में बचपन से ही अंग्रेजों के प्रति घृणा उत्पन्न करने वाली घटनाओं ने ही उनके परवर्ती जीवन में साम्राज्यवाद विरोधी राष्ट्रीय भावनाओं का रूप लिया। इसी भाव की तीव्रता एवं चिन्तन के कारण वे गांधीवादी या अहिंसावादी कार्यक्रम से संतुष्ट नहीं हो पाये और क्रांतिकारी दल ने उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर लिया। यशपाल साम्राज्यवाद को एक शोषणकारी व्यवस्था के रूप में देखते हैं। वे जिस क्रांतिकारी दल के सदस्य थे उसका लक्ष्य सामुहिक सशस्त्र क्रांति द्वारा अपने देश से विदेशी सत्ता का उन्मूलन करना तथा मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त करना था।

यशपाल का विचार है कि क्रांतिकारी दल के प्रति जनता की सहानुभूति प्राप्त करने तथा उनमें सशस्त्र क्रांति की चेतना जगाने के लिए क्रांतिकारी दल बराबर सजग थे। देश के तत्कालीन नेता इस दल की प्रतिष्ठा को खराब कर रहे थे। अतः क्रांतिकारी दल ने अपनी प्रतिष्ठा को सही रूप में प्रस्तुत करने के लिए केन्द्रीय असेम्बली में बम फेकने तथा बम फेंकने के बाद बम फेंकने वाले क्रांतिकारियों के गिरफ्तार होने का निश्चय किया। इस प्रकार भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त मिलकर केन्द्रीय असेम्बली में बम काण्ड किया। इस बम काण्ड में किसी को चोट नहीं आयी और भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त जानबुझकर गिरफ्तार हो गये। भगत सिंह को जब हाईकोर्ट में पेश किया गया तब वे अपना उद्देश्य तथा क्रांति को ठीक ढंग से परिभाषित किया। यशपाल ने इसे 'सिंहावलोकन' में लिखा है –

"भगत सिंह हाईकोर्ट के सामने कहा था 'हमें जो दण्ड दिया गया है उसके प्रति हमें कोई एतराज नहीं है। हमें एतराज है केवल कातिल कहे जाने पर और हमारा उद्देश्य गलत समझे जाने पर।"[44]

यशपाल ने बताया है कि क्रांतिकारी दल का उद्देय देश की आजादी के साथ ही शोषणात्मक समाज का अन्त करना था। क्रांतिकारी दल कांग्रेस या गांधी जी की तरह

जनता के बीच कार्य नहीं कर सकते थे। गोपनीयता उनके लिए आवश्यक थी। गोपनीयता के अभाव में क्रांतिकारी दल कई बार बिखरा तथा भंग भी हुआ।

यशपाल ने आजीवन साम्प्रदायिकता और संकीर्णता का विरोध किया। जब सावरकर ने यशपाल से जिन्ना को मारने का प्रस्ताव रखा तो यशपाल ने सावरकर से स्पष्ट रूप से कह दिया कि 'साम्प्रदायिक मतभेद से हत्या करना हम लोगों के हित और एकता के विरूद्ध समझते हैं।"[45]

यशपाल ने बताया है कि क्रांतिकारी दल आतंकवाद को क्रांति का पहला कदम मानते हैं। क्रांतिकारी दल क्रांति में आतंकवाद की कितनी भूमिका स्वीकार करते हैं इसे यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में इस प्रकार प्रस्तुत किया है –

"आतंकवाद सार्वजनिक क्रांति का पहला कदम मात्र है। इसे पूर्ण क्रांति नहीं कहा जा सकता परन्तु इसके बिना क्रांति आरम्भ नहीं हो सकेगी। संसार भर की क्रांतियों का इतिहास इसी मार्ग पर चला है। आतंकवाद अन्यासी शोषक के हृदय को दहलाता है और पीड़ित तथा दलित जनता को प्रतिकार द्वारा आत्मविश्वास, उत्साह और साहस देता है। हमारा लक्ष्य आतंकवाद नहीं है। आतंक का मार्ग क्रांति में परिणत होगा और क्रांति सर्वसाधारण जनता की सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक स्वतन्त्रता में परिणत होगी।"[46]

क्रांतिकारी दल के विस्तार के लिए दल में कुछ नये लोगों की भर्ती की गई। जिसमें महिलाओं को भी शामिल किया गया। इसमें दुर्गा भाभी, सुशीला दीदी, प्रकाशवती आदि प्रमुख हैं। यशपाल ने प्रेम और दाम्पत्य को एक सच्चे क्रांतिकारी के मार्ग की बाधा न मानकर उसे जीवन ऊर्जा का स्रोत माना है। यशपाल को यशपाल बनाने में प्रकाशवती का भी हाथ है। वे देहली बम फैक्ट्री में बम का मसाला तैयार करती थी और बम का खोल भी तैयार करती थी। बाद में यशपाल के इस विचार ने आजाद को अपना दृष्टिकोण बदलने को विवश कर दिया। इसीलिए उन्होंने अपना विवाह करना स्वीकार किया लेकिन ऐसी लड़की हो जो उनके कंधे से कंधा मिलाकर चले। 'सिंहावलोकन' में यशपाल ने इस बात पर संतोष जताया है कि क्रांतिकारियों की भावी पीढ़ियों ने इस विचार को सहजता से स्वीकार किया है। लेकिन क्रांतिकारी काम के लिए उत्साह और साहस की कोई कमी न होने पर भी क्रांतिकारी दल में स्त्रियों की भूमिका आनुषंगिक ही रही तथा इस दल में स्त्रियों की संख्या भी अधिक न थी। भगत सिंह स्त्री की स्वतन्त्र भूमिका की जरूरत को समझते थे। यशपाल और प्रकाशवती को लेकर दल में काफी विवाद हो गया था तब यशपाल ने अपने विचार को चन्द्रशेखर आजाद के सामने रखा। यशपाल का मानना है –

"हम लोगों ने क्रांति के प्रयत्न को जीवन भर का कार्यक्रम मान लिया था। उस काम को निबाहते हुए जीवन की स्वाभाविक अनुभूतियों या आवश्यकताओं को भी, यदि वे मार्ग

में अड़चन न बनें पूरा कर सकने से घबराते न थे। जिनकी भावना इस प्रकार की न थी, उन्हें मेरा व्यवहार दल के लिए कलंक जान पड़ा।"[47]

यशपाल ने क्रांति को जीवन का महत्त्वपूर्ण कार्य माना किन्तु जीवन की प्राकृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति से इंकार नहीं किया, यदि वे क्रांति कार्य में बाधक न हो तो।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में दल के भंग होने के कई कारण बताये हैं। इनका विचार है कि हि.स.प्र.स. के नाम से लगता है कि यह प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों का आदर करती है परन्तु यह प्रजातन्त्र के ढंग पर काम नहीं कर पा रही थी। उन्होंने लिखा है –

"मेरे विरूद्ध किया गया निर्णय यदि प्रजातांत्रिक ढंग से किया जाता अर्थात् दल के साथियों को इस विषय में विचार करने, अपनी–अपनी बात कह सकने का अवसर मिलता तो या तो ऐसा निर्णय नहीं होता और यदि होता भी तो किसी भी साथी को उसके विरूद्ध जाने की इच्छा और साहस न होता। आदर्श के रूप में हम लोग प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों का आदर करते थे। यह बात 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' या 'संघ' नाम से स्पष्ट है परन्तु प्रजातन्त्र के ढंग पर काम नहीं कर पा रहे थे।"[48]

यशपाल ने क्रांतिकारी दल की शक्ति के नष्ट होने का एक कारण यह भी बताया है कि "क्रांतिकारियों की बहुत सी शक्ति मुकदमों में बन गये मुखबिरों और पुलिस के मामूली अफसरों की हत्या में नष्ट हो रही थी।"[49] यशपाल का विचार है कि दल को बचाये रखने की चेष्ठा के लिए वैयक्तिक प्रयत्न नहीं किया जा सकता था क्योंकि दल में वैयक्तिक चेष्ठा के लिए कोई अवसर नहीं था। दल के सम्पूर्ण क्रांतिकारियों की चेष्ठा और उनकी शक्ति दल के नेताओं द्वारा दी गई आज्ञाओं को मानकर पूरा कर देने तक सीमित थी। उन्होंने उदाहरण देते हुए लिखा है –

"जैसे फौजी अनुशासन में सेना के सब सिपाही आज्ञा देने वाले अफसर के हाथ–पांव ही बन जाते हैं, अपनी स्वतन्त्र सूझ और निर्णय खो बैठते हैं, उससे मिलता जुलता ही व्यवहार हमारे दल में था। ऐसा व्यवहार एक सत्तात्मक व्यवस्था का प्रतीक है, जनवादी व्यक्तिगत क्रियाशीलता और स्वतन्त्रता का नहीं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति से समाज के लिए सूझ और प्रेरणा का स्रोत होने की आशा की जाती है।"[50]

'हि.स.प्र.स.' के आरम्भ से ही यशपाल क्रांतिकारी प्रयासों से सम्बद्ध रहे। लाला लाजपत राय की हत्या का बदला लेने, वाइसराय के ट्रेन को बम से उड़ाने, राजनैतिक बंदियों को जेल से छुड़ाने के लिए जेल पर आक्रमण आदि घटनाओं से उनका घनिष्ट सम्बन्ध था। 1938 तक की महत्त्वपूर्ण घटनाओं की साक्षी इस कृति में यशपाल ने क्रांतिकारी दल के प्रति अपने विचारों एवं स्मृतियों को व्यक्त किया है। दल के विरोध के

बावजूद उन्होंने वायसराय के ट्रेन को उड़ाया। दल की नीति के विरूद्ध यह कार्य कोई सामान्य कर्म न था। यशपाल यह जानते थे कि इस कार्य के परिणामस्वरूप मृत्यु हो सकती है पर वे अपने तर्क पर दृढ़ रहे। यशपाल इतने बड़े क्रांतिकारी थे परन्तु उनको वह ख्याति नहीं मिली जो भगत सिंह आदि को मिली फिर भी यशपाल का क्रांतिकार्य महान है तथा सदियों तक यह युवापीढी को प्रकाश देता रहेगा।

संदर्भ

1. यशपाल रचनात्मक पुनर्वास की एक कोशिश – मधुरेश, पृ. 15
2. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 54
3. यशपाल रचनात्मक पुनर्वास की एक कोशिश -- मधुरेश, पृ. 24
4. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 26
5. वही, पृ. 26–27
6. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – मधुरेश, पृ. 227
7. यशपाल के पत्र – मधुरेश (सम्पादक), पृ. 132
8. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 82
9. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, पृ. 62
10. वही, पृ. 96
11. वही, पृ. 98–99
12. वही, पृ. 116
13. यशपाल के पत्र – मधुरेश, पृ. 132
14. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, पृ. 219
15. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, पृ. 93
16. वही, पृ. 94
17. यशपाल का कथासाहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र, पृ. 4
18. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, पृ. 141
19. वही, पृ. 154
20. वही, पृ. 159
21. हिन्दी का गद्य साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी, पृ. 670
22. यशपाल : पुनर्मूल्यांकन – सं. कुवरपाल सिंह, पृ. 469
23. यशपाल का कथासाहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र, पृ. 5

24. सारिका – सं. कमलेश्वर, पृ. 19
25. भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक) – सं. भीमसेन त्यागी, पृ. 113
26. यशपाल का रचना संचयन – सं. मधुरेश, पृ. 25
27. यशपाल का कथासाहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र, पृ. 7–8
28. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 297
29. धर्मयुग – सं. धर्मवीर भारती, पृ. 33
30. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 10
31. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 72
32. वही, (भाग दो), पृ. 120–121
33. वही, (प्रथम भाग), पृ. 14–15
34. वही, (भाग दो), पृ. 121
35. वही, पृ. 123
36. वही, (प्रथम भाग), पृ. 59–60
37. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 242
38. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 87
39. वही, पृ. 68
40. समय लिखेगा हम सबका इतिहास – कुवरपाल, भारतीय लेखक – (यशपाल विशेषांक, 2004) पृ. 124
41. यशपाल का उपन्यास साहित्य – डॉ. गोपालकृष्ण शर्मा, पृ. 7–8
42. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 15
43. वही, पृ. 81
44. वही, पृ. 149
45. वही, (द्वितीय भाग), पृ. 96
46. वही, पृ. 121
47. वही, पृ. 213

48. वही, पृ. 215

49. वही, (प्रथम भाग) पृ. 117

50. वही, (द्वितीय भाग), पृ. 215

तृतीय – अध्याय

"आत्मकथा के निकष पर 'सिंहावलोकन' का मूल्यांकन"

(क) स्व की अभिव्यक्ति
(ख) स्मृति
(ग) घटनाओं का चयन
(घ) क्रमबद्धता
(ड़) स्पष्टता
(च) व्यक्तित्व का चित्रण
(छ) देशकाल वातावरण
(ज) भाषा शैली
(झ) उद्देश्य

यशपाल हिन्दी साहित्य के प्रगतिशील कथाकार हैं। उन्होंने उपन्यास, कहानी, निबन्ध यात्रा साहित्य पर कुशलता से अपनी लेखनी चलायी है। इसके साथ ही साथ उन्होंने आत्मकथा विधा को भी अछूता नहीं छोड़ा। 'सिंहावलोकन' में यशपाल ने अपने वृत्तान्तों को सरस, प्रामाणिक तथा स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने अतीत की घटनाओं को प्रमाणों की कसौटी पर कसने के बाद हमारे समक्ष रखा है। इतना ही नहीं उन्होंने अपने जीवन की कमजोरी, झूठ तथा फरेब को भी खुलेआम स्वीकार किया है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' भाग दो की भूमिका में लिखा है –

"अनेक भूलों में मैंने भी भाग लिया है। अपनी आलोचना करने में मैंने ममता या संकोच नहीं किया है।"[1]

परन्तु जहाँ दूसरे लोगों ने भूल की है उसका भी स्पष्टीकरण किया है –

"जिन दूसरे साथियों से भूलें हुई, उनकी चर्चा भी मैंने उसी स्पष्टवादिता से करना उचित समझा है जैसे अपनी भूलों की।"[2]

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' के अन्तर्गत अपने सशस्त्र क्रांति के संघर्ष के संस्मरण को प्रस्तुत किया है। इन संस्मरणों को यशपाल ने 'सिंहावलोकन' के तीन भागों में प्रस्तुत किया है। यह एक तरह से 'हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' का आद्योपान्त इतिहास है। भारत के स्वाधीनता संग्राम में इस संगठन का महत्वपूर्ण स्थान है। यशपाल ने अपने क्रांतिकारी जीवन के जो संस्मरण 'सिंहावलोकन' में लिखा है वह अपनी दृष्टि एवं अनुभव से लिखा है। उस आन्दोलन तथा अपने साथियों का मूल्यांकन भी अपनी ही दृष्टि से किया है। अतः यह सम्भव है कि इस मूल्यांकन से कुछ लोग असहमत हों। कुछ लोगों का आरोप भी है कि इन्होंने तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत किया है। इसका उत्तर देते हुए यशपाल ने लिखा है –

"इन संस्मरणों के पिछले दो भागों से हि.स.प्र.स. व्यक्तिगत रूप से संबंधित और परिचित अधिकांश लोगों को संतोष हुआ है, इस बात से मैं भी संतुष्ट हूँ। सभी का संतोष हो सकेगा, ऐसी आशा मैंने की थी, न मुझे है। बुद्ध ने भी सर्वनजहिताय, सर्वजनसुखाय कहने का साहस नहीं किया था। उन्हें बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय कहकर ही संतुष्ट होना पड़ा था।"[3]

'सिंहावलोकन' मात्र आपबीती नहीं है बल्कि सशस्त्र क्रांति से सम्बद्ध सिद्धान्तों और समर्पण का पूर्ण वैचारिक भूमि पर स्पष्टीकरण भी है। इन्होंने मात्र आपबीती लिखकर संतोष अनुभव नहीं किया, बल्कि तत्कालीन स्थितियों का प्रामाणिक इतिहास भी प्रस्तुत किया है।

सम्पूर्ण संस्मरण आत्मकथन शैली में है। इसलिए कई जगह अहं की प्रधानता हो गई है, फिर भी इस आत्मकथा का स्थान श्रेष्ठ आत्मकथाओं में है। इसमें आदि से अन्त तक राजनीतिक वातावरण छाया हुआ है। 'सिंहावलोकन' में यशपाल की सम्पूर्ण आपबीती समाहित नहीं हो सकी है, और आनी भी नहीं चाहिए। आत्मकथा की तो पहली विशेषता ही है – उसका अधूरा होना।

'सिंहावलोकन' के विधा निर्धारण के संबंध में कुछ विद्वानों में मतभेद है। जहाँ डा. पद्म सिंह शर्मा इसे आत्मकथा मानते हैं वहीं शान्ति खन्ना ने इसे संस्मरण की श्रेणी में रखा है। परन्तु इसे आत्मकथा की श्रेणी में रखना अधिक उचित है क्योंकि संस्मरण में कुछ ही घटनाओं का उल्लेख होता है जबकि आत्मकथा की स्थिति इसके विपरीत है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में अपने राजनीतिक जीवन के सम्पूर्ण जीवन के सम्पूर्ण घटनाओं का चित्रण किया है। उन्होंने लिखा है –

"जब भी कभी स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयत्नों का इतिहास लिखा जाने का समय आयेगा, यह उल्लेख उपयोगी हा सकेंगे।"[4]

यशपाल ने 'हिसप्रस' से संबंधित अपने जीवन की सम्पूर्ण स्मृतियों को चित्रित किया है तथा लेखक ने जिन घटनाओं का चित्रण किया है वह लेखक के ही इर्द–गिर्द घूमता है (भले ही कुछ स्थानों पर यशपाल के स्थान पर अन्य किसी की प्रधानता हो गयी है) जो इसे आत्मकथा सिद्ध करती है। आत्मकथा के तत्वों के आधार पर 'सिंहावलोकन' का मूल्यांकन कर लेना जरूरी होगा। ऐसा करके ही यह निर्धारित किया जा सकेगा कि आत्मकथा के निकष पर 'सिंहावलोकन' की प्रामाणिकता क्या है

(क) स्व की अभिव्यक्ति

'आत्मकथा' लेखक के द्वारा लिखी गई स्वयं की कथा होती है इसलिए इसमें 'स्व' की प्रधानता होती है। इसमें लेखक आत्ममंथन, आत्मविश्लेषण, आत्ममूल्यांकन तथा जीवन की सार्थकता का चित्रण करता है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में अपने क्रांतिकारी जीवन की घटनाओं को विश्लेषणात्मक ढंग से रखने का प्रयास किया है। 1938 तक के अपने समूचे जीवन–संदर्भों का उन्होंने खुलासा किया है। अपने आरम्भिक जीवन का चित्रण करते हुए यशपाल ने अपनी आर्थिक स्थिति का मार्मिक वर्णन किया है –

"मैं निःशुल्क पढ़ता और रहता हूँ, सहपाठी इस बात पर मेरा तिरस्कार करने लगे। यह अनुभूति उस आयु में भी असह्य जान पड़ती थी। बार–बार बीमार होने और बहुत कमजोर हो जाने पर जाड़ों में मुझे साधारण नियम के अतिरिक्त विशेष गरम कपड़े दिये जाते थे और पोष्टिक भोजन के रूप में मक्खन–मलाई आदि अधिक दिया जाता था जब

सहपाठी इस प्रकार के ताने कसते कि वाह एक तो मुफ्त यहाँ रहता है दूसरे सब लोगों से अधिक मक्खन–मलाई खाता है ... मैं वह चीजे लेने से इन्कार कर कह देता, "यह चीजें मुझे अरुचिकर लगती हैं। मैं इन्हें नहीं खा सकता।" इस पर सुनना पड़ता "अपने घर पर कभी खाया हो तो अच्छा लगे।"[5]

उन्होंने यह भी बताया है कि अगर माँ नौकरी नहीं करती तो वे कांगड़ा में किसी के घर बर्तन धोते। इस गरीबी के कारण तिरस्कार का उनकी मनःस्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसी प्रभाव के कारण ही वे सोचते कि यदि मैं खूब अमीर घर की संतान होता तो मुझे कितना आदर और सुख मिलता।

अंग्रेजी सत्ता हटाने के लिए यशपाल ने क्रांतिकारी साथियों के साथ जितनी भी योजनाएं बनाईं उनका उन्होंने स्पष्ट चित्रण किया। यह अलग बात है कि वह योजना सफल हुई हो या असफल। जैसे – बैंक डकैती के प्रयत्न में असफलता मिली, वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट करने में भी पूरी तरह सफलता नहीं मिली किन्तु इस विस्फोट से अंग्रेजों का दिल दहल गया था। यह उनके क्रांतिकारी जीवन का महत्त्वपूर्ण कार्य था। जिन घटनाओं में उन्होंने सक्रिय योगदान दिया, और जिन घटनाओं में उनका सक्रिय योगदान नहीं रहा उन सभी को यशपाल ने चित्रित किया है। उन्होंने सहारनपुर बम फैक्टरी में सक्रिय योगदान दिया था परन्तु साण्डर्स की हत्या में नहीं। यह संस्मरण 'प्रथम पुरुष' में लिखा गया है। अतः इसमें कई जगह लेखक का अहमभाव अभिव्यक्त हो उठा है। इन्होंने कई जग 'अपने बूते' की बात कही है और कई जगह तो 'अपने बूते' को और बढ़ा–चढ़ा कर भी प्रस्तुत किया है। अपने बूते ही उन्होंने पार्टी की ओर से सुखदेव को गोली मारने का भी सोच लिया (जबकि पार्टी की ओर से सुखदेव को गोली मार देने के निश्चय की पुष्टि किसी अन्य साधन से नहीं होती है)। अपने बूते ही उन्होंने वायसराय की ट्रेन उड़ाने का कार्य किया। दल के अधिकांश सदस्य इस विस्फोट को स्थगित करना चाहते थे। यशपाल ने स्पष्ट शब्दों में कहा –

"मैं तो इसी रात विस्फोट करूंगा"। उन्होंने आगे लिखा है – "यदि 23 दिसम्बर को ही विस्फोट कर देने का निश्चय जिद कहा जाय तो इस जिद का कारण मेरी आत्मसम्मान की भावना या अहंकार भी समझा जा सकता है।"[6]

यशपाल ने सुखदेव के सनकी–व्यवहार के संबंध में चर्चा की है। सुखदेव जब जेल में अनशन कर रहे थे यशपाल को तभी उनके व्यवहार पर आशंका हुई थी –

"सुखदेव की प्रकृति से मुझे आशंका हुई कि शायद इस आदमी ने बिना विरोध गिरफ्तार हो जाने की ग्लानि से अनशन कर दिया है।"[7]

यशपाल ने सुखदेव से जेल में मिलने आदि का कई काम कुशलता, बुद्धिमानी तथा साहस

से किया है। इन प्रसंगों में कहीं न कहीं उसका अहं भाव भी परिलक्षित होता है। चमनलाल ने लिखा है –

"यशपाल की प्रतिभा बौद्धिक कार्य करने में थी। यदि क्रांतिकारी दल सुदृढ़ होता और आन्दोलन आगे बढ़ता तो यशपाल उसमें अच्छी भूमिका निभाते।"[8]

सच में यशपाल ने क्रांतिकारी कार्य की जो योजनाएं बनाई है वह उनकी बौद्धिक प्रतिभा की ही देन है, भले ही ऐसी कई योजनाएं सफल नहीं हुईं। अतः यशपाल के कारनामों को भूलाया नहीं जा सकता है। 'भारतीय लेखक' के एक लेख में प्रदीप सक्सेना ने लिखा है –

"'लाहौर फैक्टरी' तो यशपाल के साहसी कारनामों की गाथा ही है।"[9]

यशपाल के पूरे जीवन को रचनाकार–व्यक्ति का जीवन कहा जा सकता है। यद्यपि उन्होंने जीवन कर्म के रूप में साहित्यकार का जीवन जेल से बाहर आने अर्थात 1938–1939 से ही आरम्भ कर दिया था। जो कार्य वे बुलेट से करते थे जेल से निकलने के बाद बुलेटिन से करने का निश्चय कर लिया था, परन्तु साहित्य के प्रति इनकी रुचि आरम्भ से ही रही है। पांचवी या छठी कक्षा में लिखी गई अपनी कहानी 'अंगूठी' की चर्चा करके लेखक ने अपने अन्दर पलते कथाकार के प्रारम्भिक रूप से हमारा परिचय कराया है। सुनील कुमार लवटे ने लिखा है –

"बचपन से ही लेखन, वाचन एवं चिन्तन–मनन की ओर इनकी रुचि का प्रमाण सिंहावलोकन से प्राप्त होता है।"[10]

यशपाल ने अपने राजनीतिक जीवन के साथ ही रचनाकार व्यक्तित्व को भी उद्‌घाटित किया है। आत्मकथा में वास्तविक जीवन का यथार्थ चित्रण होता है। यशपाल ने निःसंकोच रूप से यथार्थ को प्रकट किया है। अपनी कमी, झूठ आदि को भी स्वीकार किया है। पहली बार गिरफ्तार किये जाने का ख्याल यशपाल को कितना डरा गया था। इस घटना को सुनाता लेखक अपनी तत्कालीन मनःस्थिति को सही रूप में चित्रित करता है। इसके अतिरिक्त एक घटना का उल्लेख किया जा सकता है जिसमें लेखक ने अपनी मनःस्थिति का यथार्थ चित्रण किया है –

"यशपाल का परिवार गरीब था और घर में चोरी भी हो गयी थी। विदेशी कपड़ा पास में नहीं था परन्तु लोगों के सामने विदेशी–चीजों का विरोध प्रकट करना था। अतः वे एक कोट जलाने के लिए ले गये। वास्तव में वह मिल का कपड़ा था परन्तु लोगों को बताया कि हम विदेशी कपड़ों की होली जला रहे हैं।"[11]

उन्होंने सच्चाई के साथ इस बात को प्रकट किया है। आलोचकों ने आरोप लगाया है कि 'सिंहावलोकन' में आत्मकथाकार अपने साथियों को अंकित करता हुआ स्वयं को ही

पीछे छोड़ देता है। निश्चित तौर से यशपाल ने अपनी कथा के साथ अपने साथियों तथा हिसप्रस से संबंधित घटना का चित्रण किया है। इसका उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा है –

"वर्णित घटनाओं में मेरा जितना भाग था उससे अधिक अपनी बात कैसे कह सकता था।"[12]

इसी प्रकार सिंहावलोकन के तीसरे भाग की भूमिका में यशपाल ने लिखा है –

"हि.स.प्र.स. से संबंध रखने वाली अनेक ऐसी घटनाओं का उल्लेख इन संस्मरणों में है जो मेरे व्यक्तिगत अनुभव तो नहीं परन्तु उनका संबंध मुझसे इसलिए है क्योंकि मैं हि. स.प्र.स. के संगठन के अन्तर्गत था।"[13]

कई लोगों ने 'सिंहावलोकन' पर पक्षपात का आरोप लगाया है। कुछ लोगों ने तो यहां तक कहा कि यशपाल ने क्रांतिकारी आन्दोलन में भीतरघात की है और कई घटनाओं को तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत किया है तथा वे स्वयं को नायक के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं। यह सत्य हो सकता है क्योंकि यशपाल ने घटनाओं को अपनी दृष्टि से देखते हुए लिखा है। चमनलाल ने लिखा है –

"यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में अपने साथियों के जीवन संबंधी घटनाओं को जिस ढंग से लिखा है वह बहुत हद तक कथ्यपरक होते हुए भी कटुताओं को जन्म दिया है।"[14]

यशपाल ने घटनाओं को आत्मगत रूप से चित्रित किया है परन्तु इससे कटुता कुछ ही लोगों में उत्पन्न हुई है। 'सिंहावलोकन' के संदर्भ में यशपाल पर जो आरोप लगाये गये हैं इन आरोपों के आधार पर क्या यशपाल के अवदान को कम किया जा सकता है या नकारा जा सकता है, यशपाल के क्रांतिकारी व्यक्तित्व को कमतर करके देखना उचित नहीं। कमलेश्वर ने इस संबंध में लिखा है –

"जितना स्वाभिमान ऊपर है उतना ही, नीचे जितना विश्वास ऊपर है उतना ही भीतर। उसमें कोई अहमन्यता दम्भ या झूठी नम्रता नहीं है।"[15]

(ख) स्मृति

स्मृति आत्मकथा का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है। आत्मकथा में लेखक अतीत की घटनाओं को स्मृतियों के सहारे पुनः सृजित करता है और स्मृति के सहारे ही लेखक अपने व्यक्तित्व के विकास तथा वर्तमान–परिस्थितियों को दर्शाता है। यशपाल ने अपने जिये हुए जीवन की स्मृतियों को 'सिंहावलोकन' में अंकित किया है। स्मृतियों से अंकित इस आपबीती में पाठक डूबता और उसकी प्रवहमानता में बहता जाता है। यशपाल ने अपने स्मृतियों के माध्यम से अतीत के साथ वर्तमान को भी चित्रित किया है –

"पचास वर्ष पहले प्रथम महायुद्ध से पूर्व अंग्रेजों का व्यवहार कुछ और ही था उस समय सड़क पर चलने वाला प्रत्येक अंग्रेज चाहे वह साधारण व्यापारी, रेलवे का नौकर या सेना का मामूली टामी ही हो, सभी हिन्दुस्तानियों से सलामी की आशा रखता था।... उन दिनों बरसात हो या धूप कोई भी हिन्दुस्तानी किसी अंग्रेज के सामने छाता लगाकर चलने का साहस नहीं कर सकता था। नैनीताल में झील के किनारे माल रोड, जिसका नया नामकरण अब गांधी मार्ग कर दिया गया।"[16]

इसे पुनः वर्तमान से जोड़ते हुए उन्होंने लिखा है –

"आजकल प्रत्येक कांग्रेसी मंत्री नोकीली गांधी टोपी लगाये मोटर पर फिसलता हुआ पैदल चलने वाले सर्वसाधारण लोगों को परेशान करता दिखाई देता है। एक समय उस सड़क पर केवल अंग्रेज ही चल सकते थे। हिन्दुस्तानियों को इस सड़क के नीचे कच्ची सड़क पर ही चलना पड़ता था। ... परन्तु अब 'जनता के सेवक' सभी कांग्रेसी मंत्री इस सड़क पर कार दौड़ाते हैं। पैदल जनता को इससे जो असुविधा और अपमान अनुभव होता है, वह भी रामराज्य का एक वरदान है।"[17]

यहाँ लेखक ने अतीत के साथ वर्तमान स्थिति को बखूबी प्रस्तुत किया है। आत्मकथा में लेखक अतीत के साथ वर्तमान की स्मृतियों को तभी चित्रित करता है जब उससे उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। 'सिंहावलोकन' में यशपाल के व्यक्तित्व के विकास को देखा जा सकता है। अंग्रेजों के प्रति उनके मन में पैदा हुई घृणा का आधार उस समय का सामाजिक यथार्थ था। उनके मन में यह घृणा कैसे उत्पन्न हुई ? इसे बताने के लिए उन्होंने कई स्मृतियों को उद्धृत किया है। उनमें से एक का उदाहरण पर्याप्त होगा –

"एक संध्या मैं सड़क पर से गुजरते हुए मुर्गियों से छेड़खानी कर रहा था। मेम ने मुझ फटकार दिया। शायद गधा या उल्लू ऐसी कोई गाली दी। मैंने मेम को गाली से ही प्रत्युत्तर दिया। ... घर में ऐसा वातावरण छा गया कि मैंने कोई ऐसी हरकत कर दी है जिससे घर या कारखाने के लोगों पर भयंकर संकट पड़ सकता है। मेरी माँ ने एक छड़ी लेकर मुझे खूब पीटा। उस मार से मैं जमीन पर लोट–पोट गया। इस घटना के परिणाम से मेरे मन में अंग्रेजों के प्रति कैसी भावना उत्पन्न हुई होगी यह अनुमान कठिन नहीं।"[18]

इसी प्रकार एक घटना 'द्रोणाचार्य तालाब' की है जिसमें उन्होंने अंग्रेजों के आतंक को वर्णित किया है। 'सिंहावलोकन' सशस्त्र क्रांति की प्रामाणिक कहानी है। इसमें यशपाल ने अपनी ही नहीं बल्कि हि.स.प्र.स. के द्वारा भारत में किये गये स्वाधीनता के प्रयासों की स्मृति को प्रकट किया है। उन्होंने भूमिका में लिखा है –

"आत्मकथा या आपबीती लिखकर मैं पाठकों के सम्मुख आदर्श मार्ग रखने का संतोष

अनुभव नहीं कर सकता इसलिए इस कहानी को केवल स्मृतियों और अनुभवों का विचारार्थ वर्णन ही समझा जाना चाहिए।"[19]

यशपाल ने आर्यसमाज स्कूल की अपनी स्मृतियों एवं अनुभवों का वर्णन अत्यन्त रोचक ढंग से किया है। उन पर आक्षेप है कि उन्होंने कुछ घटनाओं को छोड़ दिया है। यह सही है। इसका कारण यह भी हो सकता है कि वह घटना लेखक की स्मृति में न आई हो। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उन्होंने 'सिंहावलोकन' को अपनी स्मृतियों के रूप में लिखा है, इतिहास के रूप में नहीं। यह स्मृति इतिहास का अंश जरूर है परन्तु पूर्ण इतिहास नहीं। इसलिए कुछ घटनाएं यदि छूट भी गयीं हो तो इसे आत्मकथा की श्रेणी से बाहर नहीं किया जा सकता।

(ग) घटनाओं का चयन

'सिंहावलोकन' में घटनाओं के चयन में यशपाल की कुशलता स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। इसमें सशस्त्र क्रांति की कहानी को उन्होंने अपनी सम्पूर्ण साहसिकता एवं प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। साण्डर्स की हत्या संबंधी कार्यक्रम निश्चित करते हुए क्रांतिकारी दल के सूक्ष्म पर्यवेक्षण, अपने प्रति दल के नेता आजाद का अविश्वास, यशपाल को गोली मारने का निर्णय तथा उनके बाल–बाल बचने, आजाद की दल संबंधी प्रतिक्रियाएं और अन्त में झगड़ों को समाप्त करने के लिए दल को तोड़ देने की कार्रवाई जैसी घटनाएं 'सिंहावलोकन' के आकर्षक बिन्दु है। ये सभी घटनाएं एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। आर्थिक अभाव के कारण यशपाल को गुरुकुल–जीवन में जो कष्ट अनुभव हुए उन्होंने उन घटनाओं को भी प्रस्तुत किया है 'सिंहावलोकन' पर आरोप लगाया गया है कि इसमें कहीं–कहीं घटनाओं का स्पष्टीकरण नहीं हो पाया है, जैसे – दुर्गादास खन्ना ने जब यशपाल को बुलाकर प्रकाशवती के संदर्भ में पूछा – "क्या तुमने उनसे विवाह कर लिया है ? मैंने स्वीकार किया।"[20] इस उद्धरण को लेकर चमन लाल ने लिखा है कि --

"यदि 1930 में ही वे विवाह कर चुके थे तो जेल में क्या पुनर्विवाह था।"[21] उनका मानना है कि यहां घटना स्पष्ट नहीं हो पायी है जबकि यशपाल ने इसे 'सिंहावलोकन' के तीसरे भाग में स्पष्ट कर दिया है कि – "फरारी के समय एक दूसरे को पति–पत्नी के रूप में स्वीकार किया था परन्तु उस सम्बन्ध पर सामाजिक घोषणा और स्वीकृति की मोहर तो नहीं थी।"[22] यशपाल ने जेल में विवाह सामाजिक स्वीकृति के लिए किया। अतः इस घटना को अस्पष्ट नहीं कहा जा सकता। समयानुसार इन बातों का खुलासा हुआ है।

यशपाल के मन में अंग्रेजों के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न होना, पंजाब केसरी लाला लाजपत राय की हत्या का बदला लेने, देहली असेम्बली बमकाण्ड, वाइसराय की ट्रेन को बम से उड़ाये जाने, राजनैतिक बंदियों को छुड़ाने के लिए जेल पर आक्रमण की तैयारी,

क्रांतिकारियों और पुलिस की मुठभेड़ जैसी घटनाओं से यशपाल का घनिष्ठ संबंध है। इन घटनाओं को यशपाल ने 'सिंहावलोकन' के तीन भागों में प्रस्तुत किया है। यशपाल ने जो कार्य किया है उसे उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है –

"मैं स्वयं 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' अर्थात भगत सिंह, आजाद आदि के सहयोगी के रूप में फरारी गुप्त जीवन बिताकर पुलिस पर गोली भी चला चुका हूँ। वायसराय के ट्रेन के नीचे बम–विस्फोट करने मुझे ही भेजा गया था। अपनी पुस्तक 'सिंहावलोकन' के तीन भागों में मैंने इन प्रसंगों का वर्णन ऐतिहासिक सचाई से किया है।"[23]

वायसराय के ट्रेन के नीचे बम–विस्फोट के लिए यशपाल को भेजा नहीं गया था बल्कि एक तरह से वे जबरदस्ती गये थे। इसकी पुष्टि 'सिंहावलोकन' से होती है।

नेशनल कालेज में भगत सिंह भगतसिंह, सुखदेव आदि उनसे किस प्रकार मिले और कैसे साथी बन गये, इसे उन्होंने स्पष्ट किया है। जिन घटनाओं में उनका सक्रिय योगदान था उन घटनाओं चित्रण तो उन्होंने किया ही है जिनमें नहीं था उन्हें भी प्रस्तुत किया है। विरेन्द्र मोहन ने एक लेख में लिखा है –

"'सिंहावलोकन' यशपाल के क्रांतिकारी आन्दोलन संबंधी संस्मरणों का दस्तावेज है जिसमें उन्होंने अपने समय की घटनाओं, स्थितियों का सांगोपांग विवेचन किया है। इसके आधार पर क्रांतिकारी आन्दोलन में यशपाल की भूमिका को पहचाना जा सकता है। ... वस्तुतः लेखक यशपाल से पहले ही एक क्रांतिकारी योद्धा का जन्म हो चुका था। गुरुकुल कांगड़ी में अध्ययन के दौरान यशपाल की चेतना में राष्ट्रीय भावों का उदय और ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध घृणा का भाव उत्पन्न हो गया था।"[24]

यशपाल के संबंध में यह कहा गया है कि उनको जो घटनाएं अपने अनुकूल जान पड़ी उन्हें ही 'सिंहावलोकन' में स्थान दिया है और जो घटनाएं प्रतिकूल जान पड़ी उन्हें छोड़ दिया है। इसका उत्तर देते हुए स्वयं यशपाल ने लिखा है –

"जिन व्यक्तियों या घटनाओं से मेरा पर्याप्त आधिकारिक परिचय नहीं था, उनके विषय में चुप रहना ही मैंने उचित समझा है। जिन घटनाओं और व्यक्तियों की चर्चा मैं आलोचनात्मक ढंग से न कर सकता था, उन्हें भी छोड़ दिया था।"[25] आगे भी लिखा है –

"अतीत की उन घटनाओं के विषय में लिखने का अधिकार और अवसर सभी को है जो साथी अपनी स्मृति द्वारा उन घटनाओं या उस समय पर अधिक प्रकाश डालकर वास्तविकता के विश्लेषण में सहायता दे सकते हैं उन्हें ऐसा अवश्य करना चाहिए।"[26]

यह आत्मकथा क्रांति के पूर्ण इतिहास का दावा नहीं कर सकती, परन्तु यह क्रांतिकारी आन्दोलन की घटनाओं और विचारधारा के परिचय के लिए प्रामाणिक अन्तर्दृष्टि अवश्य दे सकेगी। यशपाल ने घटनाओं को शृंखलाबद्ध रूप में प्रस्तुत किया है कहीं भी घटनाएं विशृंखलित होते नहीं दिखाई देती हैं।

(घ) क्रमबद्धता

आत्मकथा में वर्णित घटनायें एक दूसरे से सम्बद्ध तथा क्रमबद्ध होती हैं। यशपाल ने क्रांतिकारी क्रियाकलापों के संस्मरण को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही उन्होंने पारिवारिक, तत्कालीन राजनीति, आदि घटनाओं को क्रम से रखा है। 'सिंहावलोकन' से यह स्पष्ट हो जाता है कि यशपाल सर्वप्रथम आर्यसमाज के सम्पर्क में आये, युवावस्था में स्वाधीनता आन्दोलन में गांधीवाद से प्रभावित हुए। उसके बाद क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े और उन्होंने साहस तथा जोखिम का रास्ता चुना। इसके बाद वे समाजवाद की ओर आकर्षित हुए। यही इनके जीवन का विकास है तथा यशपाल ने इसे क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया है। गोपालकृष्ण शर्मा ने लिखा है –

"यशपाल राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के बीच जन्मे। राष्ट्रीय आन्दोलन की सरगर्मियों में उनका पहला परिचय आर्य समाज के गुरुकुल में हुआ। उसके बाद यशपाल कांग्रेस की सभावों में भाग लेने लगा। बाद में अहिंसा और दया धर्म से क्रूर शासकों का हृदय परिवर्तन उनकी समझ में नहीं आया। और अपना सम्बन्ध क्रांतिकारियों से जोड़ लिया।"[27]

यशपाल ने लाला लाजपत राय की हत्या, साण्डर्स वध, असेम्बली बम–विस्फोट, बम बनाना, वायसराय की ट्रेन के नीचे बम–विस्फोट, बैंक डकैतियां, भगत सिंह का शहीद होना, आदि अनेक घटनाओं का चयन किया और उसे 'सिंहावलोकन' में क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया है। लेखक ने संस्मरणों के काल–निर्देश में जो सतर्कता बरती है उससे इन संस्मरणों ने तथ्य का रूप धारण कर लिया है। यशपाल आत्मकथाकार की अपेक्षा सशक्त इतिहासकार हैं। उन्होंने 1938 तक के राष्ट्रीय आन्दोलन को गहरी एवं वस्तुपरक नजर से देखा है।

'सिंहावलोकन' के वर्ण्य–विषय की यह विशेषता है कि उसमें संदिग्धता की कमी है। यशपाल ने वर्ण्य–विषय को स्पष्ट करने के लिए स्थान–स्थान पर प्रमाणित आधारों, तत्कालीन दस्तावेजों, समाचार पत्रों आदि का प्रयोग किया है जिससे ऐतिहासिक तथ्य के रूप में उसकी प्रामाणिकता सिद्ध होती है। यशपाल ने इश्तिहारों का भी उल्लेख किया है जिससे यह पता चलता है कि किस क्रांतिकारी के पकड़वाने पर कितना इनाम था।

यशपाल के ऊपर 3,000 रुपये का इनाम था। लेखक ने वर्ण्य–विषय में अनर्गल कल्पनाओं तथा अफवाहों का सहारा नहीं लिया है। लेखक ने अपना तथा अपने साथियों का संक्षिप्त जीवन प्रस्तुत किया है, उसकी प्रस्तुतिकरण में क्रमबद्धता तथा सर्तकता नजर आती है। यद कदा वर्ण्य–विषय में अनावश्यक विस्तार दिखाई देता है जिससे उसका प्रभाव क्षीण हो गया है। 'बम के खोज में' शीर्षक के अन्तर्गत यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। फिर भी यशपाल ने घटनाओं को यथाक्रम रूप में चित्रित किया है जिसके कारण यह आपबीती इतिहास तो नहीं किन्तु इतिहास का अंग जरूर बन गयी है।

(ड़) स्पष्टता

कोरिन फेड ने 'यशपाल लुक्स बैक' में 'सिंहावलोकन' का मूल्यांकन किया है। 'सिंहावलोकन' को पढ़ते समय सबसे सुखद अनुभूति उन्हें कुछ हुई तो वह स्पष्टवादिता और निष्कपटता है जो आत्मकथा लेखन के लिए अनिवार्य है। दो टूक बातों का प्रायः संस्मरणात्मक लेखन में अभाव पाया जाता है, (दो टूक बात कहने के लिए जिस साहस की आवश्यकता होती है वह सबमें नहीं होती), ज्यादातर आत्मकथाओं में आत्मप्रतिष्ठा का ही विस्तार मिलता है परन्तु यशपाल की आत्मकथा में इस प्रकार की कोई कमजोरी नहीं दिखाई देती है। उन्होंने अपने कम आकर्षक और कमजोर दोनों पक्षों पर लेखनी चलाई है। इस संदर्भ में मधुरेश ने लिखा है –

"तार्किकता, वास्तविकता और विश्वनीयता पर उन्होंने हमेशा जोर दिया है।"[28]

वह जीवन में जितने साहसी, बहादुर और क्रांतिकारी थे उतने ही लेखन में भी। कई जगह अगर वह असहनशील, स्वार्थी और संवेदनहीन हैं तो उन्होंने इन पक्षों को भी उसी तटस्थता एवं स्पष्टता से सामने लाया है। यशपाल स्पष्टवादी थे। इन्होंने मिस्टर हालैण्ड से बात करते हुए निर्भीकता से जो उत्तर दिया है वह उनके स्पष्टवादिता को ही प्रमाणित करता है –

"मतलब आप खूब समझते हैं आप भी मानते हैं कि इस देश के 99% आदमी भूखे नंगे रहकर किस प्रकार निर्जीव और निरूत्साह हो रहे हैं और उन्हें अपनी अवस्था सुधारने का कोई अवसर नहीं। उनके प्रयत्नों पर आपके विदेशी शासन की गुलामी का शिकंजा कसा हुआ है। इस विदेशी शासन से मुक्ति के लिए हमारा यह प्रयत्न है।"[29]

यशपाल ने अपने कमजोर पक्ष को भी सामने रखा है। उन्होंने बताया है कि उनका बच्चों से लगाव कम है इसीलिए दुर्गा भाभी का पुत्र शची उन्हें 'गन्दे चाचा जी'[30] कहता था।

भगत सिंह के गिरफ्तारी के बाद जब लाहौर की बम फैक्टरी पकड़ी गयी और यशपाल बच निकले तब उन्हें फरारी की जिन्दगी बितानी पड़ी। अपनी फरारी की अवस्था का स्मरण करते हुए उन्होंने अपनी स्थिति को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है –

"उन दिनों मेरा कलेजा बराबर धकधक करता था। जान पड़ता था बड़े भारी संकट से गुजर रहा हूँ। सभी की आंखे संदेह से मुझे ही खोजती जान पड़ती।"[31]

लेखक ने अपने साथियों का मूल्यांकन बड़ी ईमानदारी एवं स्पष्टता से किया है। यशपाल क्रांतिकारी थे तथा उन्होंने अपनी बातों को निर्भय होकर रखा है। प्रदीप सक्सेना ने उनकी स्पष्टवादिता के सम्बन्ध में लिख है –

"उन्होंने जो लिखा पूरी जिम्मेदारी से लिखा। उसे डरकर बदला नहीं। इसीलिए वे यशस्वी हुए और हिन्दी जनता का आदर और सम्मान मिला।"[32]

(च) व्यक्तित्व का चित्रण

आत्मकथा में लेखक अपने व्यक्तित्व के साथ–साथ अन्य समकालीन व्यक्तियों के व्यक्तित्व का चित्रण करता है। ये व्यक्तित्व काल्पनिक न होकर वास्तविक होते हैं। 'सिंहावलोकन' में सशस्त्र क्रांति तथा यशपाल की कहानी तो वर्णित है ही, साथ ही विभिन्न अनुभवों, घटनाओं तथा प्रसंगों के द्वारा अनेक क्रांतिकारी साथियों के जीवन को सजीवता से अंकित किया गया है। यशपाल ने उनके आचार, विचार, सूझ–बूझ कर्मठता, वीरता आदि का वास्तविक परिचय दिया है। इन्होंने भगत सिंह, सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद, परमानन्द, शिव वर्मा, जयचन्द आदि के व्यक्तित्व को उद्घाटित किया है। व्यक्तिगत संस्मरण लिखकर भी यशपाल ने दल तथा साथियों के इतिहास को उसकी सम्पूर्ण व्यापकता में सूक्ष्म रेशों से बांधा है। अपनी भूमिका में यशपाल ने ईमानदारी से स्वीकार किया है – "यह मेरे साथ मेरे साथियों की आपबीती है।"[33]

उन्होंने अपने को घटनाओं के ममत्व से दूर रखने का प्रयास किया है किन्तु कई जगह व्यक्तिवादी भावना के कारण दूसरे साथियों को उतना महत्त्व नहीं दिया है जितना देना चाहिए था। इस संदर्भ में एक प्रसंग यहां प्रस्तुत किया जा सकता है। जब दल ने भगत सिंह को जेल से छुड़ाने की योजना तैयार की तो उस समय यशपाल ने भगवती से कहा –

"तुम मोह में फंसे हो। भगत सिंह चल चुका कारतूस है। यह लड़ाई का समय है मोह का नहीं। चल चुके कारतूस की गोली ढूढ़ने के लिए अपने दूसरे कारतूसों (अर्थात साथियों) को नष्ट करने से क्या लाभ ?"[34]

इसी प्रकार एक जगह आजाद के संबंध में भी लिखा है –

"आजाद क्या करेगा ? जो तुम समझा दोगे वह कह देगा।"[35] यशपाल ने आजाद को बैलबुद्धि तक कहा है। यह उनके व्यक्तिवादी भावना की प्रधानता को सिद्ध करता है। इसीलिए भगत सिंह ने कहा कि – "कलाकार से कहो वह मेनीफेस्टो लिखे।"[36] सुखदेव के व्यक्तित्व के चित्रण में भी यशपाल की अहं भावना को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यशपाल ने ही 'जयगोपाल' और इन्द्रपाल का सम्पर्क दल से करवाया था जिसमें जयगोपाल 'लाहौर षड़यन्त्र' केस में मुखबीर बन गया। परन्तु यशपाल कहीं न कहीं यह मानने को तैयार नहीं हैं कि जयगोपाल अपने से मुखबीर बन गया। उन्होंने सुखदेव पर आशंका व्यक्त करते हुए अपना तर्क दिया है –

"यदि सुखदेव स्वयं बयान न देते तो जयगोपाल भी बयान न देता।"[37]

'सिंहावलोकन' को पढ़ते समय आरम्भ में लगता है कि सुखदेव पात्र कोई और है वह नहीं है जो भगत सिंह तथा राजगुरु के साथ हंसते–हंसते शहीद हो गया था। सुखदेव के प्रति यशपाल ने जिस तिरस्कार के भाव से लिखा है वह उनके व्यक्तित्व के व्यक्तिवादी पक्ष को उद्घाटित करता हैं अतः लेखक ने जो संस्मरणात्मक परिचय दिया है उसमें उनकी कलाकुशलता ही नहीं उनके कमजोरी और विवशताओं का भी परिचय पाठक को मिलता है। फिर भी यशपाल ने व्यक्तित्व का जो उद्घाटन किया है वह महत्त्वपूर्ण है। 1939 ई. तक की महत्त्वपूर्ण घटनाओं की साक्षी यह कृति अपने क्रांतिकारी साथियों की स्मृति से भीगी हुई है। मणि मन्मथनाथ गुप्त तथा आजाद आदि के संस्मरणों से सहज ही बंधी यह कृति उनकी साम्प्रदायिकता विरोधी भावनाओं और विचारों के सहज प्रसंगों के उद्धरण से सम्पन्न है। हिन्दू–मुसलमान का भेद स्वीकार न करने वाले अपने साथियों के विचारों तथा व्यवहारों का उदाहरण देते हुए यशपाल ने उन लोगों के खानपान की चर्चा करते हुए उनके व्यावहारिक लोचकता को प्रभावित किया है –

"एक पतीला था, उसमें खिचड़ी बना लेते। कभी–कभी इसी खिचड़ी में मांस भी डाल लेते। आजाद ब्राह्मणत्व की रक्षा के लिए मास के टुकड़े को गाली देकर परे हटा देते और शेष का आहार कर लेते। ... आजाद को मांस पसंद नहीं था।"[38]

यशपाल ने पार्टी के सम्बन्ध में साथियों के विचारों को भी उद्घाटित किया है। वर्तमान परिस्थितियों में क्रांतिकारी दल की कार्यपद्धति और विचार प्रणाली के निरर्थक हो जाने का अनुभव पार्टी के सदस्यों को हो रहा था परन्तु सहसा परिवर्तन के लिए सदस्यों की मानसिक तैयारी न थी। यशपाल ने इस तथ्य को तटस्थ भाव से अंकित किया है। क्रांतिकारियों में प्रमुख व्यक्तियों का झुकाव समाजवादी विचारधारा की ओर था और कुछ सदस्यों का हो भी रहा था। यशपाल ने इसका यथार्थ चित्रण किया है।

यशपाल ने गांधी जी के अहिंसा, अनसन, उपवास, सत्याग्रह आदि से समाज परिवर्तन एवं समता की स्थापना की कल्पना को निरर्थक माना है और गांधी की व्यक्तिवादी मान्यताओं को एक 'डिक्टेटर'[39] की संज्ञा प्रदान की है। प्रकाश चन्द्र मिश्र ने लिखा है –

"गांधीवादी अहिंसा सामाजिक संघर्षों के साथ अपना सामंजस्य बिठाने में असमर्थ हैं। इस विज्ञान के युग में भौतिकवाद के युग में अपार्थिव परोक्ष, दैवीशक्ति से प्रेरणा ग्रहण कर राजनीति कहाँ तक चलेगी।"[40]

आत्मकथा में लेखक उन्हीं व्यक्तियों का चित्रण करता है जिससे उसका व्यक्तित्व प्रभावित होता हैं यह प्रभाव सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। गांधी जी का व्यक्तित्व कहीं न कहीं यशपाल के व्यक्तित्व को प्रभावित किया है, भले ही नकारात्मक सही। इसीलिए वह कांग्रेस को छोड़कर क्रांतिकारी संगठन में मिल गये।

नेशनल कालेज में हिन्दी के तेजस्वी लेखक उदयशंकर भट्ट की प्रेरणा से यशपाल ने 1924 में एक कहानी लिखी जो बरेली की पत्रिका में प्रकाशित हुई। बेचन शर्मा 'उग्र' का लेखक व्यक्तित्व यशपाल के व्यक्तित्व को प्रभावित किया। 'उग्र' का लेखन यशपाल को अधिक रुचता था। उनके द्वारा सम्पादित 'मतवाला' को पढ़ते समय अपने विद्यार्थी जीवन में यशपाल वैसा ही लिखने का स्वप्न देखा करते थे। 'उग्र' जी की मूर्तिभंजक उग्रता यशपाल की रुचि के अनुकूल थी इसीलिए यशपाल ने यह स्वीकार किया है –

"मैं कभी–कभी कुछ बड़ी बातें लिख जाता हूँ मेरी ऐसी प्रवृत्ति का कुछ उत्तरदायित्व उग्र जी को अपनाना चाहिए।"[41]

'सिंहावलोकन' में स्वतन्त्रता प्रेमियों के त्याग, बलिदान तथा धैर्य का अद्‌भुत चित्र खींचा है। भगत सिंह के व्यक्तित्व का चित्रण करते हुए लिखा है कि भगत सिंह के पिता ने पुत्र की प्राण रक्षा के लिए गवर्नर के पास प्रार्थना पत्र भेजा किन्तु गवर्नर ने अस्वीकार कर दिया। इसे देखकर भगत सिंह को लगा –

"My father has Stabbed me in the Back (मेरे पिता ने ही मेरी पीठ मे छुरी भोंक दी)।"[42]

यशपाल का व्यक्तित्व चाहे साहित्यकार का हो या क्रांतिकारी का वह तत्कालीन व्यक्तियों के व्यक्तित्व से प्रभावित अवश्य है इसलिए उन्होंने उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व को उद्‌घाटित किया हैं यशपाल पर आक्षेप है कि वह अपनी अपेक्षा शेष चरित्रों के स्पष्टीकरण पर ज्यादा बल देते हैं। यह सत्य है। इसके पीछे कई कारण हो सकते हैं।

एक तो यह कि यशपाल की भूमिका जहाँ तक और जिस प्रकार की थी वहीं तक वह लिख सकते हैं उससे अधिक बढ़ा–चढ़ कर तो लिखेंगे नहीं। दूसरा यह कि लेखक ने उन्हीं व्यक्तियों को उद्घाटित किया जिनसे उसके व्यक्तित्व का विकास हुआ हैं तीसरे यह भी हो सकता है कि इन संस्मरणों को लेखक ने 'हिसप्रस' की गतिविधयों के रूप में व्यक्त किया हो, इसीलिए इसमें किसी एक चरित्र–विशेष की प्रधानता नहीं है। उन्होंने 'सिंहावलोकन' की भूमिका में स्वीकार किया है कि इसमें "मेरी निजी बातों की अपेक्षा इसमें मेरे साथियों की बातें अधिक पायी जायेंगी।"[43]

(छ) देशकाल वातावरण

आत्मकथा आत्मनिष्ठ विधा अवश्य है लेकिन उसमें देशकाल वातावरण अपने पूरे प्रभाव के साथ सक्रिय रहता है। यदि आत्मकथा लेखक के चरित्र का पूर्ण चित्र है तो परिवेश इसे उभारने वाले रंगों का संयोजन है। 'आत्मकथा' लेखक से शुरू होकर घर, समाज, राष्ट्र और विश्व तक को अपनी परिधि में समेट लेता है। 'सिंहावलोकन' 1921–1938 तक के समय का इतिहास बताने में हमारी मदद करती है। इसमें यशपाल का व्यक्तित्व और परिवार ही उभरकर सामने नहीं आया है बल्कि इसमें समूचा देशकाल तथा क्षेत्र भी अत्यन्त जीवन्त रूप में उभरकर सामने आया है। क्रांतिकारी हलचलों एवं षड़यन्त्रों के बारे में उन लोगों के साहस की यथार्थ कथा स्पष्टता से प्रकट करना यशपाल के ही बस की बात है। उन्होंने इस आत्मकथा में तत्कालीन साम्प्रदायिक स्थिति को भी उद्घाटित किया है। यहाँ यशपाल के साम्प्रदायिकता विरोध का एक उद्धरण प्रस्तुत किया जा सकता है – 'जब यशपाल संगठन की आर्थिक सहायता के लिए 1929 में पुराने क्रांतिकारी गणेश दामोदर सावरकर से मिलने गये तब सावरकर ने उनके समक्ष यह प्रस्ताव रखा कि वह जिन्ना की हत्या कर दे तो उन्हें पचास हजार की सहायता प्रदान कर दी जायेगी। यशपाल ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए कहा –

"साम्प्रदायिक मतभेद से हत्या करना हम लोग देशहित या सर्वसाधारण जनता के हित और एकता के विरूद्ध समझते थे।"[44]

इस घटना से तत्कालीन साम्प्रदायिक स्थिति का तो पता चलता ही है साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि उस समय क्रांतिकारियों को कुछ लोग आतंकवादी, हत्यारा समझते थे। परन्तु हिंसा उनका प्रमुख मकसद नहीं था बल्कि स्वाधीनता था। 'सिंहावलोकन' में स्थान–स्थान पर सामाजिक, धार्मिक रूढियों तथा अन्धविश्वास का भी चित्रण मिलता है। भगत सिंह के घर तम्बाकू की खेती तथा गुरुकुल की शिक्षा व्यवस्था आदि प्रसंग इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। यशपाल ने भगत सिंह के गांव की दशा का यथार्थ चित्रण किया है।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में परतन्त्र काल की राजनैतिक स्थितियों एवं भारतीय क्रांतिकारी दल की गतिविधियों का जितना सुन्दर वर्णन किया है उतना अन्य युगीन आत्मकथाओं में दुलर्भ है। गांधी पर जवाहरलाल नेहरू की टिप्पणी और जवाहरलाल नेहरू पर यशपाल की टिप्पणी देखने से उस समय की राजनैतिक चेतना का स्पष्ट पता चलता है –

"जो भी हो हम गांधी जी को अद्वितीय चमत्कारिक नेता मानते थे। उनमें पूर्ण विश्वास, आंख मूंदकर उनके पीछे चलने के लिए तैयार थे।"[45]

इस पर यशपाल ने लिखा है – "पंडित नेहरू की इस उदारता का अनुकरण करना सर्वसाधारण जनता के लिए सम्भव नहीं था। पंडित नेहरू जैसे सचेत और सतर्क मस्तिष्क के लिए भी सम्भव न होता यदि उन्हें यह आश्वासन न रहता कि वे या उनकी श्रेणी भारतीय समाज की मालिक श्रेणी है और अंग्रेजी शासन के हाथों से शक्ति ले लेने का अर्थ उनका अपना राज्य ही होगा। ऐसा आश्वासन किसानों, मजदूरों या मुझ जैसे लोगों को तो नहीं था।"[46]

यशपाल ने निःसंदेह तत्कालीन नेताओं, कांग्रेसी नेताओं, किसानों और जनता की व्यावहारिक कठिनाइयों और नेताओं की अदूरदर्शिता पर अपनी स्पष्ट टिप्पणी दी है और लेखकीय व्यंग्यात्मक शैली से उसे और धारदार बनाया है। कहीं–कहीं सैद्धान्तिक रूप से कांग्रेस का विरोध करने वाले यशपाल का निजी मन्तव्य एक ओर व्यक्तिनिष्ठ लगता है और कहीं–कहीं आज भी बहुत ताजा समसामयिक स्थिति में हमें कुछ सोचने को विवश भी करता है। तत्कालीन ब्रितानी आतंक का उल्लेख 'सिंहावलोकन' में मिलता है। 'द्रोणसागर' तालाब के प्रसंग में यह देखा जा सकता है। रोलेट बिल के विरूद्ध जो राजनीतिक आन्दोलन शुरू हुआ था उन्होंने इसका संक्षेप में चित्रण किया है। इससे उस समय के लाहौर की परिस्थितियों का परिचय मिलता है।

यशपाल का 'सिंहावलोकन' तत्कालीन राजनीतिक विचारों से परिपूर्ण प्रतिनिधि ग्रन्थ है जिसमें भारतीय पराधीनता की कहानी सजोई गयी है। लेखक ने सत्याग्रहों, बम–विस्फोटों, हत्याकाण्डो आदि के जरिये इस संघर्ष को सजीव बना दिया है। 'इन्कलाब जिन्दाबाद' जैसे नारों का प्रयोग कर उसने वातावरण में जोश लाया है। इन वर्णनों से तत्कालीन राजनीतिक गतिविधियां सजीव हो उठी हैं। यदि तत्कालीन तटस्थ इतिहास के खो जाने की कल्पना की जाय तो निश्चित रूप से इतिहासकार पुनः अपनी ऐतिहासिक सामग्रियों के लिए इस आत्मकथा का सहारा लेगा। राजीव सक्सेना ने लिखा है –

"समकालीन आन्दोलनों के इतिवृत्ति को पेश करती उनकी तीन खण्डों में समाहित कृति 'सिंहावलोकन' है। निश्चित ही तत्कालीन इतिहास ग्रन्थों में इसका एक सम्मानजनक

स्थान रहेगा। यह कृति कथात्मक नहीं है बल्कि संस्मरणों के रूप में लिखी गयी है। इसमें अनेक ऐसे तथ्य समाविष्ट है जो ब्रिटिश हुकूमत के साये में दर्ज नहीं हो सकते थे।"[47]

यशपाल ने तत्कालीन हिन्दू और मुसलमानों की आपसी घृणा का विश्लेषण करते हुए हिन्दू धर्म की मूलभूत कमजोरी पर उंगली रखी है जहां अस्पृश्यता का सिद्धान्त साधनहीनों की शिक्षा और आर्थिक उन्नति का अवसर न देने की व्यवस्था से जुड़ा हुआ था –

"हिन्दुत्व का धार्मिक दर्शन या अध्यात्मवाद जीव मात्र में मनुष्य और कुत्ते तक में एक ही आत्मा और समाज जीव होने की बात कहता है परन्तु ऊंचे वर्णों के शासन में बंधे समाज को वर्ण व्यवस्था या अस्पृश्यता के चौखटे में जकड़कर अपने शासन को मजबूत बनाये रखने में कसर नहीं छोड़ता था। इस बात की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि हिन्दू समाज में अस्पृश्यता और साधनहीनता या गरीबी साथ–साथ रही है। अस्पृश्यता एवं वर्ण की हीनता साधनहीनों को शिक्षा और आर्थिक उन्नति का अवसर न देने की व्यवस्था का नाम था। अपने आर्थिक अधिकारों को अपनी श्रेणी तक सीमित रखने के लिए ऊंचे वर्ण के लोग अपने मुख से प्राणिमात्र की समानता के ज्ञान की बात कहते थे, परन्तु यह ज्ञान शूद्र के कानों तक जाने देना अनुचित और पाप समझते थे। शूद्र या अछूत के कान में ज्ञान पहुंच जाने पर वे ज्ञान की बात कहने वाले ब्राह्मण की जीभ काटने का नियम नहीं शूद्र के कान में गला हुआ सीसा डालकर उसे समाप्त कर देने का विधान करते थे।"[48]

इससे तत्कालीन सामाजिक स्थिति का स्पष्ट बोध होता है। तत्कालीन ब्राह्मणों की स्थिति का पता चलता है। यशपाल ने गुरुकुल के वातावरण का वर्णन किया है। वह गुरुकुल में मंत्रों के तोतारटन्त से बहुत दुखी थे। इसीलिए वह कल्पना करता है कि 'अंग्रेज धोती कुर्ता, जनेऊ, खड़ाऊ पहना है और वह उसका अधिष्ठाता बन गया है।"[49] गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली में जहाँ एक ओर भारतीय इतिहास और संस्कृति को गौरवान्वित किया जाता था वहीं दूसरी ओर ब्रह्मचर्य के महत्त्व पर भी विशेष बल दिया जाता था। यही कारण है कि गुरुकुल में विद्यार्थियों के लिए विशेष पाठ्य पुस्तकें तैयार करवायी जाती थी जिनमें स्त्रियों या यौन व्यवहारों के सभी प्रसंग निषिद्ध थे। लेखक ने गुरुकुल की शिक्षा के अधूरेपन को सही संदर्भ के साथ समझाया है –

"गुरुकुल के स्नातक समाज के वास्तविक रूप से अपरिचित रह जाते और इस तरह उनका रूप किसी आधुनिक पुस्तकालय में रखी प्राचीन पाण्डुलिपि सा जान पड़ता है।"[50]

यशपाल ने तत्कालीन गुरुकुल की शिक्षा व्यवस्था (रूढिग्रस्त शिक्षा) पर आक्रोश व्यक्त किया है। 'सिंहावलोकन' यशपाल की आपबीती के साथ समकालीन देशकाल परिवेश के संस्मरणों के संदर्भ में भी उल्लेखनीय रचना है। तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक परिस्थितियों के अंकन से आत्मकथा में जीवन्तता आ गयी है तथा

यशपाल के व्यक्तित्व को आकार भी मिलता है।

(ज) भाषा शैली

'सिंहावलोकन' की भाषा सरल, सुबोध एवं रोचकता से युक्त है। इसमें अनुभूति की गहराई एवं सत्यता का प्रतिपादन हुआ है। इसमें यशपाल की भाषा दो प्रकार की है। जब लेखक किसी प्रसंग का विश्लेषण करता है तो भाषा बोझिल लगती है लेकिन जब वह किसी पात्र विशेष के क्रिया–कलापों, विशेषताओं को प्रकट करता है तब वह भावानुकूल हो गयी है। स्थान–स्थान पर आंचलिक शब्दों का प्रयोग किया है। लचीलापन उनकी भाषा का अनिवार्य गुण है। इससे भाषा में सहजता और स्वाभाविकता बनी रहती है। प्रकाशचन्द्र मिश्र ने लिखा है –

"यशपाल का गद्य अति सुन्दर और मोहक है। उनकी भाषा अलंकृत है। वे संस्कृत शब्दावली से अपनी शैली का श्रृंगार करते हैं। उनके प्रकृति के वर्ण विशेष हृदयग्राही है।"[51]

कांगड़ी के प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण हृदयग्राही है। लचीलापन उनकी भाषा का अनिवार्य गुण है। इससे भाषा में सहजता और स्वाभाविकता बनी रहती है। स्वतन्त्र रूप से घटना एवं स्थान के अनुसार मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग किया है –

"हम सभी लोग समाज की व्यापक हांडी के एक चावल हैं।"[52]

लेखक ने बीच–बीच में अपने भाषा को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए शायरी का भी प्रयोग किया है, जैसे –

"कोई दम का मेहमां हूँ ऐ अहले महफिल
चिरागे सहर हूँ बुझा चाहता हूँ।"[53]

"गालिब खस्ता के बगैर कौन काम बन्द है,
रोइये जारोजार क्यों कीजिये हाय–हा क्यों।"[54]

"इब्दताए इश्क है रोता है क्या
आगे–आगे देखिये होता है क्या।"[55]

रामचन्द्र तिवारी ने यशपाल की भाषा के संदर्भ में लिखा है –

"उन्होंने जीवन संदर्भ को सजीव बनाने के लिए परिवेश के अनुकूल शब्दचयन किये हैं। ... पात्र परिस्थिति तथा अनुभूति और विचारों के अनुसार भाषा को सजीव और सशक्त बनाने के लिए आपने सभी स्रोतों से शब्द ग्रहण किये हैं, जिनसे अध्ययन और अनुभव बल पर ग्रहण कर सकते थे।"[56]

'सिंहावलोकन' में यशपाल के भावों और विचारों के परिवर्तन के साथ ही शैली में भी परिवर्तन आया है। इसीलिए इसमें कहीं भावात्मक शैली का प्रयोग दिखाई देता है तो कहीं अहंवादी, कहीं व्यंग्यात्मक तो कहीं वर्णनात्मक आदि। इन्होंने भाषा–शैली का प्रयोग इस प्रकार किया है कि कहीं भी क्लिष्टता नहीं आने पायी है बल्कि इसमें उपन्यास का सा आनन्द तथा रोचकता मिलती है।

यशपाल ने 'भावात्मक शैली' में हृदय को झकझोर देने वाली घटना का विधिवत चित्र खींचा है। 'सिंहावलोकन' में कुछ स्थल अत्यन्त हृदय विदारक हैं, जैसे – यशपाल की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण गुरुकुल के बच्चों द्वारा तिरस्कार, भगतसिंह आदि को फांसी आदि। 'बम–विस्फोट' से भगवती भाई की मृत्यु के समय यशपाल ने कुछ समय के लिए अपना धैर्य खो बैठा था –

"वह दृश्य देखकर हृदय उभड़कर मुंह में आ गया। होठ काटकर अपने–आपको वश में किया। विह्वल होकर फूट–फूटकर रो रहा था। अब क्या हो सकता था ? शव को उठाकर ले जाने से उसे फिर बंग्ले से बाहर निकालने की समस्या बन जाती ... साथ लाई हुई एक चादर से हमने भगवती भाई का शरीर ढक दिया।"[57]

इस कथन में क्रांतिकारियों के राष्ट्रप्रेम एवं संवेदनशीलता परिलक्षित होती है। परन्तु यहाँ भगवती भाई की हृदयविदारक मृत्यु का चित्रण करते हुए लेखक अत्यधिक क्षुब्ध एवं भाव व्यथित होते हुए भी संयमित सा जान पड़ता है। जेल–जीवन के चित्रण में भी वर्णन की ही प्रधानता है।

यशपाल ने यथास्थान 'व्यंग्यात्मक शैली' का भी प्रयोग किया है। उन्होंने तत्कालीन गुरुकुल की शिक्षा–व्यवस्था, धार्मिक अंधविश्वास, अस्पृश्यता पर तीखा व्यंग्य किया है। गुरुकुल की शिक्षा–व्यवस्था के संदर्भ में एक उद्धरण इस प्रकार है –

"किसी भी स्त्री का दिखाई दे जाना उतना ही अप्रत्याशित था जितना कि दिल्ली के कनाट या बम्बई के फोर्ट इलाके में जंगली हिरणों अथवा नीलगायों के झुण्ड का कुलांचे मारते हुए दिखाई दे जाता। ... एक ऐसे समाज और कला की कल्पना की जाती थी जिसमें स्त्री की जरूरत ही न थी।"[58]

भगत सिंह, राजगुरु तथा सुखदेव को 13 मार्च 1931 को फांसी के तख्ते पर लटका दिया गया। आश्चर्य की बात है कि गांधी जी ने इन शहीदों के फांसी के प्रश्न को महत्त्व नहीं दिया जबकि जनता का भावात्मक दबाव था कि वायसराय के साथ समझौते की बातचीत करते समय गांधी जी भगत सिंह तथा उनके साथियों की फांसी की सजा को रद्द किये जाने की शर्त जरूर रखे। यशपाल ने व्यंग्यात्मक शैली में लिखा है –

"इस समझौते के लिए जो ग्यारह शर्तें वायसराय के सामने पेश की थीं उनमें से एक शर्त देश भर में शराब निषेध की थी पर भगत सिंह आदि को फांसी न दिये जाने की नहीं। गांधी जी शराब निषेध के लिए सरकारी शक्ति से जनता पर दबाव डालना नैतिक समझते थे परन्तु भगत सिंह आदि की फांसी रद्द करने के लिए विदेशी सरकार पर जनमत का दबाव डालना अनैतिक समझते थे।"[59]

इसी प्रकार उन्होंने एक जगह और लिखा है – "लाहौर जेल में हिन्दुस्तानी सिपाहियों और अफसरों ने भगत सिंह आदि को फांसी पर लटका देने की आज्ञा तो पूरी की परन्तु इसके लिए उन्होंने जो दुख अनुभव किया गांधी जी की दृष्टि में वह भी पाप ही रहा होगा। अर्थात् गांधी जी के अनुसार मानवता और राष्ट्रीय भावना की अपेक्षा मालिक की गुलामी निवाहना ही बड़ा धर्म था।"[60]

'सिंहावलोकन' प्रथम–पुरुष की शैली में लिखा गया है इसलिए इसमें आत्मकथन शैली की उद्भावना हुई है। आदि से अन्त तक इसी शैली का निर्वाह हुआ है। यशपाल को गुरुकुल का वातावरण पसन्द नहीं था। इसलिए वह अंग्रेजों को उस वातावरण में रहने की कल्पना कर लेता है और अपने को उसका अधिष्ठाता मानता है। बैजनाथ राय का मानना है –

"इस अद्भुत कल्पना का विश्लेषण यही हो सकता है कि प्रभुता और शक्ति सम्पन्न अंग्रेजों की पोषक के प्रति आदर होने से उसे अपनाने की इच्छा होना और साथ ही दासता, प्रतिहिंसा से अंग्रेजों को अपने अधीन देखने की भी इच्छा।"[61]

'सिंहावलोकन' में अहं भाव कई जगह दिखाई देता है; उदाहरणार्थ – यशपाल ने लिखा है कि वे रात को भगत सिंह के साथ घूमते हुए उनसे कहते हैं –

"Let us Pledge our live to our Covntry (आओ हम लोग अपना जीवन देश के लिए अर्पण करने की प्रतिज्ञा करें)। भगत सिंह ने सहसा गम्भीर होकर अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया – I do Pledge (मैं प्रतिज्ञा करता हूँ)।"[62]

यशपाल द्वारा उल्लिखित इस प्रसंग से बहुत पहले ही भगत सिंह क्रांतिकारी मार्ग पर अग्रसर हो गये थे। चमनलाल ने लिखा है –

"यदि यह घटना अक्षरतः सही भी हो तो भी भगत सिंह ने अपना वचन निभा दिया किन्तु यशपाल ने नहीं निभाया।"[63]

यह पूरी तरह सही नहीं है क्योंकि यशपाल ने भी अपनी प्रतिज्ञा को निभाया है। भले ही वह माध्यम बदल गया है। बुलेट के माध्यम से न निभाकर उन्होंने बुलेटिन के माध्यम से

निभाया है। यशपाल पर दल की तरफ से कई आरोप लगाये गये तथा उनके प्रति अविश्वास का प्रस्ताव भी रखा गया फिर भी चन्द्रशेखर आजाद को यशपाल पर पूरा विश्वास था। इसीलिए दल के टूट एवं बिखर जाने के बावजूद आजाद ने अपने हाथ से रिवाल्वर यशपाल के हाथ में थमाकर कहा कि –

"सोहन (यशपाल का बदला हुआ नाम) को हथियार देना लोगों को अनुचित लगेगा परन्तु मैं जो उचित समझता हूँ कर रहा हूँ। दूसरे लोग जाने हथियार का क्या करेंगे लेकिन सोहन जरूर इसका उपयोग करेगा।"[64]

अतः कह ाकते है कि 'सिंहावलोकन' की भाषा–शैली प्रभावकारी है। इस संदर्भ में डॉ. रवीन्द्र भ्रमर ने लिखा है –

"यह रचनाकार अपने कृति में क्रांतिकारी संघर्षशील जीवन को मार्मिक एवं समर्थ भाषा शैली में रूपायित करती है।"[65]

(झ) उद्‌देश्य

आत्मकथा में लेखक अपने अनुभवों तथा स्मृतियों के माध्यम से आत्मपरीक्षण, आत्ममूल्यांकन, आत्माभिव्यक्ति तथा तत्कालीन परिवेश का चित्रण करता है। अपने अनुभवों के चित्रण से वह पाठकों को प्रेरणा देना चाहता है। कभी–कभी लेखक के मन में आत्मस्तुति की भावना प्रवल हो जाती है। 'सिंहावलोकन' के माध्यम से 'हिसप्रस' का प्रामाणिक इतिहास तथा तत्कालीन देशकाल परिवेश को जाना जा सकता है। लेखक ने अपनी स्मृतियों, अनुभवों तथा घटनाओं को प्रमाणित सिद्ध करने के लिए स्थान, काल, दस्तावेज, समाचार पत्र आदि का प्रयोग किया है। जिन अनुभवों तथा स्मृतियों को यशपाल ने प्रस्तुत किया है उससे उस समय की स्थिति का स्पष्ट रूप से पता चलता है। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' की उपयोगिता के संदर्भ में लिखा है –

"जब भी कभी स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयत्नों का इतिहास लिखा जाने का समय आयेगा, यह उल्लेख उपयोगी हो सकेंगे।"[66]

'सिंहावलोकन' में रोचकता एवं उत्सुकता आदि से अन्त तक बना है जो आत्मकथा का एक प्रमुख उद्‌देश्य है। परन्तु मात्र रोमांचकारी घटनाओं का विवरण इस संस्करण का उद्‌देश्य नहीं है बल्कि सशस्त्र क्रांति की चेष्ठाओं को प्रमाणिक रूप से प्रस्तुत करना इसका मूल उद्‌देश्य कहा जा सकता है।

यशपाल ने अपनी आपबीती लिखकर पाठकों के सम्मुख आदर्श मार्ग रखने का संतोष अनुभव नहीं किया है, बल्कि समाज के 'व्यापक हाडी के चावल' के रूप में अपने आपको

परखने और परखे जाने की बात की है। उन्होंने मौलिक उदाहरण के द्वारा अपना यह महान उद्देश्य प्रकट किया है। सरस उपमा के द्वारा यशपाल ने समझाया है कि –

"हम सभी लोग समाज की व्यापक हांडी के एक–एक चावल हैं। हांडी की अवस्था जानने के लिए कुछ चावलों को निकालकर परख लिया जाता है। इस कहानी के रूप में मैं पाठकों के सम्मुख स्वयं को और अपने साथियों को कुछ चावलों के रूप में प्रस्तुत करने का साहस कर रहा हूँ क्योंकि मैं अपने समाज की हांडी की अवस्था परखी जाने के लिए प्रस्तुत हूँ।"[67]

इससे लगता है कि यशपाल ने अपने आपको, अपने साथियों को तथा समाज को सबके सामने प्रस्तुत करना चाहता है। निश्चित तौर से क्रांतिकारी आन्दोलन की घटनाओं और उस आन्दोलन की विचारधारा के परिचय के लिए यह कृति एक प्रामाणिक अन्तर्दृष्टि देती है –

यशपल की यह विशेषता है कि उन्होंने एक ओर बुलेट के प्रयोग से देशभक्ति का परिचय दिया तो दूसरी ओर बुलेटिन के प्रयोग से उसे अमर विचारों के रूप में पेश किया है। उन्होंने स्वयं 'सिंहावलोकन' में लिखा है –

"मुझे जो कुछ भी करना है, साहित्य के साधन से करूंगा। ... पिस्तौल की बजाय कलम की ओर था। अब अपना काम साहित्य के माध्यम से कर रहा हूँ।"[68]

यशपाल उन साहित्यकारों में से हैं जो कलम और हथियार चलाने में समान रूप से सफल रहे हैं। क्रांतिकारी दल में कार्य करते समय भी उनकी कलम रूकी नहीं। खगेन्द्र ठाकुर ने लिखा है –

"जो यशपाल भगतसिंह, चन्द्रशेखर आदि के साथ स्वाधीनता संग्राम में पिस्तौल चलाते थे वही 'हिसप्रस' के विघटित हो जाने पर कलम लेकर इसी उद्देश्य से पूरी तन्मयता एवं तत्परता से संघर्ष के मैदान में उतर गये। युद्ध वही योद्धा भी वही केवल हथियार बदल गया।"[69]

यशपाल ने अपने एक पत्र में लिखा है –

"मेरा उद्देश्य जनता के हितों की रक्षा करना। जब मैं सक्रिय क्रांतिकारी था तब भी मैंने कलम को छोड़ा नहीं और जेल में भी लिखता था क्यों मैं समझता हूँ कि साहित्य विद्रोह की भावना पैदा करने का साधन है और उससे जनता की क्रांतिकारी चेतना विकसित होती है।"[70]

इस संस्मरण के माध्यम से यशपाल ने अपने व्यक्तित्व को सबके सम्मुख ला देना चाहा है। यह जरूर है कि इस प्रयास में कहीं–कहीं 'आत्मतत्व' की प्रधानता हो गई है। परन्तु इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि यशपाल का उद्देश्य मात्र आत्मस्तुति हैं उन्होंने अपने आपको मनुष्य समझकर 'अपने जीवन से सम्बद्ध घटनाओं का विश्लेषण करके उन्हें विचार के लिए दूसरे के सम्मुख रखा हैं 'सिंहावलोकन' से यशपाल के व्यक्तित्व के विकास को जाना जा सकता है। इसमें लेखक की समाजवादी विचारधारा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है क्योंकि इन्होंने जगह–जगह पर 'मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का विरोध' किया है। इस संबंध में डॉ. रवीन्द्र भ्रमर ने लिखा है –

"उनकी आत्मकथा उनके प्रगतिशील जीवन–दर्शन को समझने की दृष्टि से भी उपयोगी है।"[71]

यशपाल ने अपने संस्मरणों को मात्र कथन हेतु प्रस्तुत नहीं किया है अपितु उसके जरिये वह अपनी विचारधारा का भी प्रतिपादन करना चाहते हैं। वे देशकाल वातावरण तथा अन्य व्यक्तित्व के साथ अपने मस्तिष्क का भी विश्लेषण करना चाहते हैं –

"मेरी और मेरे साथियों की दृष्टि में इन घटनाओं की कारण रूप विचारधारा का ही महत्त्व अधिक था। मैं उस विचारधारा की भी चर्चा करना चाहता हूँ। ... समाज के लिए किसी भी व्यक्ति की आपबीती का यही उपयोग हो सकता है। व्यक्तिगत अनुभवों की विवेचना तटस्थ होकर कर सकने से व्यक्तियों और समाज की परिस्थितियों और उनकी मानसिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया जा सकता है।"[72]

यशपाल ने क्रांतिकारी साथियों का जो जीवन–परिचय प्रस्तुत किया है उससे वर्तमान युवा पीढ़ी को प्रोत्साहन एवं प्रेरणा भी मिलती है इसे आत्मकथा की महत्त्वपूर्ण उद्देश्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसमें लेखक तत्कालीन परिवेश के साथ अपने भावों, विचारों, मानसिक एवं व्यक्तित्व के विकास को प्रस्तुत करना चाहता है और अपने आपको दूसरे के सम्मुख रखना चाहता है।

'सिंहावलोकन' में विस्तार और बारीकी का सतर्क निर्वाह तथा आत्मनिर्णय, ईमानदारी और पारदर्शिता इन्हें जीवन्त इतिास बना देती हैं यह सब होते हुए भी आवश्यक नहीं है कि आप उन सभी निष्कर्षों से सहमत हों जो लेखक ने अपने अनुभव और चिन्तन से पाये हैं। इतिहास के आन्तरिक तथ्यों के आधार पर आप लेखक से भिन्न निष्कर्षों पर पहुंच सकते हैं। यशपाल के निष्कर्षों में कहीं–कहीं अतिवादी रूझान मिलती है। जैसे – 'सिंहावलोकन' के तीसरे खण्ड के आखिरी अध्याय 'जेल में' में स्वतन्त्रता संग्राम में गांधी जी की भूमिका की समीक्षा में यह अतिवाद देखा जा सकता है –

"हमारे स्वतन्त्रता के आदर्शों और उनकी प्राप्ति के लिए संघर्ष में गांधीवादी सिद्धान्त हमारे विरूद्ध और साम्राज्यवाद के सहायक हैं।"[73]

तीन भागों में विभाजित यशपाल की आत्मकथा कलापूर्ण है। इसमें उनके असाधारण व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई देती है जिससे हमारे सामने बहुत ही सूक्ष्म तथा महत्त्वपूर्ण पहलू उजागर हुआ है। आत्मकथा की दृष्टि से भाषा शैली हृदयस्पर्शी है। इसमें यशपाल ने अपने क्रांतिकारी संस्मरणों को प्रस्तुत किया है तथा साथ ही तत्कालीन वातावरण की गतिविधियों को भी स्पष्ट रूप से रखा हैं इसमें मूल रूप से 1921–1938 तक के क्रांतिकारी क्रियाकलापों के संस्मरणों को प्रस्तुत किया गया है। इन संस्मरणों को लेखक ने 'हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' के इतिहास के रूप में प्रयुक्त किया है। यही कारण है कि इसमें न सिर्फ लेखक के व्यक्तित्व से संबंधित संस्मरण है बल्कि 'हिसप्रस' से संबंधित घटनाओं एवं व्यक्तियों के संस्मरणों का भी समावेश है। इन संस्मरणों को लेखक ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के परिपार्श्व में रखकर उसकी ऐतिहासिकता को सिद्ध किया है। 'सिंहावलोकन' यशपाल की आत्मकथा के साथ समकालीन संस्मरणों के संदर्भ में भी उल्लेखनीय रचना है।

कुछ लोगों ने यशपाल पर आरोप लगाये हैं। सुखदेव के भाई मथरा प्रसाद थापर ने 'अमर शहीद सुखदेव' में यशपाल पर आरोप लगया है –

"यशपाल बहुत ही दम्भी और मनमानी प्रकृति के व्यक्ति थे। उन्होंने दल और आजाद के विरोध के बावजूद वायसराय की ट्रेन उड़ाने का एक्शन कर ही डाला था।..."[74]

यह आरोप कुछ हद तक ठीक है क्योंकि वायसराय की ट्रेन उड़ाने के प्रश्न के संदर्भ में उनका अहं आ गया था। परन्तु आजाद का विरोध करना उनका मकसद नहीं था। इसीलिए अंत में आजाद से उनका संबंध मधुर हो गया था। दुर्गा देवी बोहरा ने यशपाल के व्यवहार के बारे में लिखा है –

"उनमें विवेक और न्याय की भावना स्वाभाविक थी किसी के प्रति न्याय अन्याय की उनकी वह सरल भावना कडुवाहट के रूप में भी प्रकट हो जाया करती थी। यशपाल में एकमात्रा तक अहंकार भी था और बच्चों की सी सरलता भी।"[75]

पूरी ईमानदारी के साथ आत्मचित्रण करना एक कठिन कार्य है। इसीलिए कहीं न कहीं कुछ कमी आ ही जाती है। वैसा ही 'सिंहावलोकन' में हुआ है। फिर भी 'सिंहावलोकन' आत्मकथा की दृष्टि से एक श्रेष्ठ आत्मकथा है। इसमें आत्मकथा के सभी तत्व विद्यमान हैं। वह चाहे आत्म का चित्रण हो या स्मृति देशकाल वातावरण हो या कथात्मकता;

भाषा–शैली हो या उद्देश्य, अन्य व्यक्तित्व का उद्घाटन हो या स्पष्टता, ये सभी 'सिंहावलोकन' में उत्कृष्ट रूप में समाहित हैं। इस आत्मकथा में कहीं–कहीं अहं की प्रधानता हो गयी है तथा घटनाएं स्पष्ट नहीं हो पायी हैं फिर भी यशपाल ने घटनाओं को ईमानदारी, स्पष्टता तथा तटस्थता के साथ प्रस्तुत किया है। उपेन्द्र नाथ अश्क ने लिखा है –

"यशपाल द्वारा किया गया सत्य का निरूपण किसी को अच्छा लगे या न लगे पर उसकी सत्यता से प्रायः इनकार नहीं किया जा सकता है।"[76]

'सिंहावलोकन' के संदर्भ में अश्क का यह कथन उसकी मूल भावना से पूरी तरह से मेल खाता है।

संदर्भ

1. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
2. वही
3. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
4. वही
5. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, पृ. 107
6. वही, पृ. 108
7. वही, पृ. 15
8. यशपाल के उपन्यास – चमन लाल, पृ. 26
9. यों बने यशपाल – 'यशपाल' – प्रदीप सक्सेना, भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक) – सं. भीमसेन त्यागी, पृ. 151
10. यशपाल एक समग्र मूल्यांकन – डा. सुनील कुमार लवटे, पृ. 51
11. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 51
12. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
13. वही (तृतीय भाग)
14. यशपाल के उपन्यास – चमन लाल, पृ. 9
15. अपनी निगाह में – कमलेश्वर, पृ. 74
16. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 37–38
17. वही, पृ. 38
18. वही, परिचय
19. वही, परिचय
20. वही (द्वितीय भाग), पृ. 197
21. यशपाल के उपन्यास – चमन लाल, पृ. 28
22. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, पृ. 141

23. यशपाल के पत्र – सं. मधुरेश, पृ. 43
24. यशपाल : पुनर्मूल्यांकन – कुंवरपाल सिंह (संपादक) पृ. 308
25. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
26. वही
27. यशपाल का उपन्यास साहित्य – डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा, पृ. 13
28. यशपाल : पुनर्मूल्यांकन – कुंवरपाल सिंह (सम्पादक), पृ. 131
29. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 14–15
30. वही, पृ. 155
31. वही, पृ. 161
32. यशपाल : पुनर्मूल्यांकन का ऐतिहासिक राय – प्रदीप सक्सेना, प्रदीप सक्सेना, भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक) – सं. भीमसेन त्यागी, पृ. 134
33. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
34. वही (भाग दो), पृ. 143
35. वही
36. वही, पृ. 144
37. वही (प्रथम भाग), पृ. 91
38. वही (तृतीय भाग), पृ. 54
39. यशपाल का उपन्यास साहित्य – डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा, पृ. 29
40. यशपाल का कथा साहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र, पृ. 12
41. सिंहावलोकन द्वितीय भाग – यशपाल, पृ. 184
42. वही (तृतीय भाग), पृ. 72
43. वही (प्रथम भाग), भूमिका से
44. वही (द्वितीय भाग), पृ. 16
45. वही (प्रथम भाग), पृ. 60
46. वही (प्रथम भाग), पृ. 60

47. यशपाल : एक क्रांतिकारी योद्धा और लेखक – राजीव सक्सेना, भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक) – सं. भीमसेन त्यागी, पृ. 415
48. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, पृ. 98–99
49. वही (प्रथम भाग), पृ. 39
50. वही, पृ. 41
51. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 75
52. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, भूमिका से
53. वही (तृतीय भाग), पृ. 105
54. वही
55. वही, पृ. 108
56. हिन्दी का गद्य–साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी, पृ. 684–685
57. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग), पृ. 161
58. वही (प्रथम भाग), पृ. 43
59. वही (तृतीय भाग), पृ. 70–71
60. वही, पृ. 73
61. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 226
62. सिंहावालोकन (प्रथम भाग), यशपाल, पृ. 73
63. यशपाल के उपन्यास – चमन लाल, पृ. 19
64. सिंहावलोकन (द्वितीय भाग) – यशपाल, पृ. 212
65. हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास (चतुर्दश भाग) – सं. डॉ. हरवंशलाल शर्मा, पृ. 491
66. सिंहावलोकन (तृतीय भाग) – यशपाल, भूमिका से
67. वही (प्रथम भाग), परिचय से
68. वही (तृतीय भाग), पृ. 159
69. यशपाल : पुनर्मूल्यांकन – सं. कुवर पाल सिंह, पृ. 82

70. यशपाल के पत्र – सं. मधुरेश, पृ. 121

71. हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास (चतुर्दश भाग) – सं. डॉ. हरवंशलाल शर्मा, पृ. 491

72. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, परिचय से

73. वही (तृतीय भाग), पृ. 102

74. यशपाल रचनात्मक पुनर्वास की एक कोशिश – मधुरेश, पृ. 42

75. क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व – सं. मधुरेश, पृ. 7

76. वही, पृ. 24

उपसंहार

आत्मकथा के अन्तर्गत लेखक जीवन की दुर्बलताओं और उपलब्धियों की संतुलित झांकी प्रस्तुत करते हुए अपने समग्र व्यक्तित्व को यथातथ्य तथा निष्पक्ष रूप से चित्रित करता हैं इसमें लेखक और नायक की भूमिका एक ही व्यक्ति की होती है। लेखक 'स्व' एवं 'स्व' के अनुभवों को आत्मकथा में वर्णित करता है। आत्मकथा में लेखक का तटस्थ एवं निष्पक्ष होना तथा आत्म प्रशंसा के भाव से बचे रहना बहुत जरूरी है। जिस आत्मकथा लेखक में इसका अभाव होता है वह उच्चकोटि का आत्मकथाकार नहीं हो सकता। यशपाल ने अपने एक लेख 'यथार्थवाद के संबंध में मेरे कुछ विचार' में कलाकार की सार्थकता के संबंध में लिखा है –

"कलाकार की सार्थकता इसी में है कि वह पाठकों का अपने पात्रों से रागात्मक संबंध स्थापित करके, उनके विचारों और भावनाओं को दिशा दे सके परतु समाज की वस्तु और परिस्थितियों के यथार्थ से विच्छिन्न आदर्शवादी (उसे स्वप्नवादी कहना ही अधिक उचित होगा) साहित्य में यह क्षमता नहीं रहती।"[1]

आत्मकथाकार आत्मकथा के बहाने मात्र स्मृतियों को जगाता ही नहीं बल्कि अपने वर्तमान बोध के आलोक में उन्हें परखता भी है। बनारसीदास कृत 'अर्धकथानक' हिन्दी की प्रथम आत्मकथा मानी गयी है। यह आत्मकथा मध्यकालीन है। अन्य गद्य विधाओं की तरह आत्मकथा की रचना भी आधुनिककाल से ही शुरू होती है। इसी काल से इसका विकास होना प्रारंभ होता है।

प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कथासाहित्य के प्रमुख और सशक्त रचनाकार यशपाल ने लगभग सभी साहित्यिक विधाओं में अपनी रचनाशीलता का परिचय दिया है। यदि यह कहें कि यशपाल ने तात्विक दृष्टि से विभिन्न साहित्यिक विधाओं के सृजन तथा अन्वेषण को एक नवीन आयाम देने का प्रयास किया तो गलत न होगा। हिन्दी साहित्य मे प्रेमचन्द की परम्परा का विकास यशपाल ने किया है। भाषा शैली की दृष्टि से भी वह प्रेमचन्द के बहुत करीब हैं। बालमुकुन्द मिश्र ने लिखा है –

"उनकी कलम का लोहा विरोधियों को भी मानना पड़ता है, इसलिए कि यशपाल की निर्बाध जीवन जीवन–परिस्थितियों का चित्रण करने की क्षमता बहुत ही सशक्त है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि प्रेमचन्द के बाद यशपाल ही एक ऐसे अपने टाइप के उपन्यासकार हैं जिसमें प्रेमचन्द जैसे जागरूक वर्णन शैली की चमक दिखाई देती है। ... उसे जो कुछ कहना है, बात सीधे ढंग से कहता है।"[2]

क्रांतिकारी यशपाल का जीवन उतार–चढाव के द्वन्द्व की रोचक कहानी है। यशपाल से पूर्व हिन्दी साहित्य में आत्मकथा लिखने की परम्परा तो थी पर आत्मकथा के विकास में यशपाल का महत्त्वपूर्ण योगदान है। तीन भागों में प्रकाशित यशपाल की आत्मकथा 'सिंहावलोकन' हिन्दी

आत्मकथा साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसमें यशपाल के जन्म से लेकर जेल से मुक्त होने तक का पूरा परिचय मिलता है। वे किस प्रकार आर्यसमाज से निकलकर कांग्रेसी बने और किस प्रकार कांग्रेस से निकलकर क्रांतिकारी बने, इसका पूरा परिचय 'सिंहावलोकन' में मिलता है। यशपाल ने आत्मकथा के माध्यम से अपने क्रांतिकारी स्मृतियों एवं घटनाओं को चित्रित किया है तथा स्थान–स्थान पर सामाजिक एवं धार्मिक रूढियों पर व्यंग्य प्रहार भी किया है। उन्होंने गरीबों के साथ अमीरों के व्यवहार को एवं उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति को ताड़ा है। इसे गुरुकुल के चित्रण में तथा तत्कालीन क्रांतिकारियों की आर्थिक स्थिति के चित्रण में देखा जा सकता है।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में पारिवारिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दासता की स्थितियों और उनमें पनपती एवं विकसित होती क्रांतिकारी चेतना को एकसाथ अंकित किया है। इसमें तत्कालीन राजनैतिक स्थितियों एवं भारतीय क्रांतिकारी दल की गतिविधियों का पूर्ण इतिहास सन्निहित है। विदेशी शासन से मुक्ति की इच्छा से सम्बद्ध अनुभूतियों तथा स्मृतियों को कुरेदता हुआ आत्मकथाकार अपने अन्दर हमेशा से अंग्रेजों के प्रति घृणा तथा द्वेष को पलता हुआ पाता है।

यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में एक तरफ सामाजिक व्यवस्था, हमारे कुसंस्कार एवं रूढ़ियों को तथा दूसरी तरफ रोलेट एक्ट का विरोध, सांडर्स वध, बम बनाने, बम फैक्ट्री, वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट, बम का दर्शन आदि क्रांतिकारी जीवन की घटनाओं एवं संस्मरणों को प्रस्तुत किया है। साथ ही 'हिसप्रस' के कार्यकर्ताओं में बाद में हुए सैद्धान्तिक मतभेदों तथा इन मतभेदों के कारण दल कैसे टूट गया, इन सबका भावुक विवरण प्रस्तुत किया है 'विवेकी राय' ने लिखा है –

"यशपाल क्रांतिकारी और स्वाधीनता आन्दोलनों अथवा समाजवादी कार्यक्रमों में दिलचस्पी रखने वालों के चरित्र और उनकी सिद्धान्तनिष्ठा का बहुत ऊँचाई पर परखकर कड़ी कसौटी पर परखते हैं।"[3]

'सिंहावलोकन' के प्रथम भाग में तो यशपल से कहीं अधिक चर्चा भगत सिंह, सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद, बटुकेश्वर दत्त और भगवतीचरण बोहरा की है। यशपाल इन लोगों के पारिवारिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सूत्रों को भी समेटकर चलते हैं ताकि इन क्रांतिकारियों के उत्सर्ग और समर्पण को एक वास्तविक परिप्रेक्ष्य मिल सके। कुछ लोगों का आरोप है कि यह यशपाल की आत्मकथा न होकर दूसरों की आत्मकथा है किन्तु यह सही नहीं है। यशपाल की जहां जितनी भूमिका है वहाँ उन्होंने उसे उतना चित्रित किया है। अतिरेकपूर्ण वर्णन, उत्कृष्ट आत्मकथा का लक्षण नहीं।

देश की स्वतंत्रता के लिए अपनी जान पर खेलने वाले क्रांतिकारियों के लिए गांधी जी ने कायर आदि शब्दों का प्रयोग किया है। सबको समान स्वतंत्रता और समान अवसर प्रदान करने तथा मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त करने के लिए क्रांतिकारियों ने क्रांति का रास्ता

अपनाया था। यशपाल का भी यही लक्ष्य है। इसीलिए भगवती भाई तथा यशपाल ने मिलकर गांधी के 'बम का मार्ग' के लेख के विरोध में 'बम का दर्शन' घोषणा–पत्र तैयार किया था। यशपाल एक सशक्त इतिहासकार माने जा सकते हैं। इन्होंने 'सिंहावलोकन' में 1938 तक के राष्ट्रीय आन्दोलन का वस्तुपरक इतिहास प्रस्तुत किया है। 'सिंहावलोकन' से यह भी पता चलता है कि चन्द्रशेखर आजाद, भगत सिंह, सुखदेव, यशपाल अपने समय के बड़े क्रांतिकारी थे। इन्होंने 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' के नाम से एक संगठन बनाया था। समाजवादी भावन से प्रेरित होकर ही भगत सिंह ने नारा लगाया था – 'इंकलाब जिन्दाबाद', साम्राज्यवाद का नाश हो, संसार के मजदूरों एक हो। इस सेना के क्रांतिकारियों ने साण्डर्स वध, असेम्बली बमकाण्ड, लाहौर बम काण्ड, लाहौर बम फैक्ट्री, वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट आदि कई ऐसे साहसिक कार्य किये जिससे ब्रिटिश साम्राज्य एक बार हिल उठा। वायसराय इरविन के ट्रेन के नीच बम–विस्फोट यशपाल ने ही किया था। इन्हें पकड़ने के लिए सरकार की ओर से 3,000 रुपये का इनाम घोषित किया गया था। यशपाल ने अपने क्रांतिकारी जीवन के अनुभवों का व्योरेवार तथा विस्तृत विवेचन अपनी आत्मकथा में किया है। 'सिंहावलोकन' के तीनों भाग केवल यशपाल के जीवन से ही संबंधित नहीं है बल्कि तत्कालीन ब्रिटिश साम्राज्यशाही के विरूद्ध संघर्ष करने वाले क्रांतिकारी साथियों के जीवन से भी संबंधित है। इन्होंने इसमें क्रांति के संबंध में अपनी तथा अपने साथियों की धारणाओं का विवेचन किया है।

आरम्भ में यशपाल पढ़ना भी चाहते थे और राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेना भी। प्रकाशचन्द ने इस संबंध में लिखा है –

"एक ओर उज्ज्वल भविष्य की महत्त्वाकांक्षाएं और दूसरी ओर राष्ट्रीय आन्दोलन इन दोनों में किसे महत्त्व दिया जाय – यह एक कठिन अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति थी जो यशपाल के मन को आन्दोलित करने लगी।"[4]

अन्ततः यशपाल मैट्रिक की परीक्षा देकर कांग्रेस के स्वयं सेवक बनकर अवैतनिक रूप से कार्य करने लगे। जब 1922 ई. में गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन को चौरी–चौरा काण्ड के बाद स्थगित कर दिया तो सारे स्वयं सेवक निराश हो गये। इसमें यशपाल भी थे। यशपाल ने निराश होकर नेशनल कालेज में दाखिला लिया। नेशनल कालेज में ही इनके क्रांतिकारी जीवन की नींव पड़ी। यहीं पर ये कई प्रसिद्ध क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आये। यशपाल ने नेशनल कालेज से ग्रेजुएट होने के कारण सरकारी नौकरी मिलने की आशा नहीं थी इसलिए उन्होंने कोयले के कारखाने में नौकरी की परन्तु यह नौकरी उनके अनुकूल न थी इसलिए उन्होंने उसे छोड़ दिया और क्रांतिकारी कार्यों में सक्रियता से भाग लेने लगे। क्रांतिकारी कार्यों में अपनी सक्रियता का परिचय उन्होंने वायसराय की ट्रेन के नीचे विस्फोट करके दिया। मधुरेश ने 'यशपाल के पत्र' में लिखा है –

"'सिंहावलोकन' में यशपाल ने विस्तार से उन प्रभावों की चर्चा की है जिन्होंने उनके अन्दर अंग्रेजों के प्रति आक्रोश पैदा करके उन्हें अन्ततः एक क्रांतिकारी की भूमिका में ला खड़ा किया।"5

आरम्भ में यशपाल क्रांतिकारी कार्यों में प्रत्यक्ष भाग नहीं लेते थे। बाद में ये क्रांतिकारी कार्यों में प्रत्यक्ष, प्रमुख तथा सक्रिय रूप से भाग लेने लगे; – वायसराय के ट्रेन के नीचे बम विस्फोट का आयोजन तथा बम विस्फोट, बम की खोज, बम का निर्माण आदि यशपाल के सक्रिय रूप से भाग लेने के उदाहरण हैं। आजाद की शहादत के बाद ये दल के नेता निर्वाचित हुए।

'सिंहावलोकन' में केवल यशपाल के तथा उनके अन्य साथियों के ही क्रांतिकारी व्यक्तित्व का चित्रण नहीं हुआ है वरन् देश के तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक युग एवं परिवेश का यथार्थ चित्रण भी हुआ है। अतः इसे एक प्रामाणिक ऐतिहासिक और आत्मचरित्रात्मक आत्मकथा कहा जा सकता है।

यशपाल ने आजीवन साम्प्रदायिकता और संकीर्णता का विरोध किया है। उन्होंने बचपन से ही अंधविश्वास और रूढ़िगत मान्यताओं से भरे समाज को देखा था। इसलिए वह जानते थे कि इन मान्यताओं को तोड़े बिना समाज का विकास नहीं हो सकता। यशपाल आर्यसमाज की देन को स्वीकार करते थे किन्तु संयम की जिन्दगी से भीतर ही भीतर पलने वाली कुंठा को वे पहचान गये थे। इसलिए उन्होंने आर्य समाज के इस 'पोंगा–पंथी का विरोध किया। यशपाल ने 'सिंहावलोकन' में गुरुकुल के संयमपूर्ण वातावरण तथा रहन–सहन पर प्रकाश डालते हुए लिखा है –

"समाज और व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य और विकास के लिए संयम और ब्रह्मचर्य के महत्त्व से इंकार नहीं किया जा सकता, परंतु गुरुकुल में इसके लिए जो उपाय व्यवहार में लाये जा रहे थे वे मनोवैज्ञानिक या प्राकृतिक नहीं थे। उन्हें केवल दमन मात्र कहा जा सकता था।"[6]

इस वर्जनापूर्ण वातावरण ने यशपाल को बहुत ही प्रभावित किया। ये परलोक की अपेक्षा इहलोक के समर्थक थे। कमलेश्वर जब तक यशपाल के बारे में सिर्फ यह जानते थे कि वह गुरुकुल में पढे हैं तब तक उनकी धारणा कुछ और थी परन्तु यशपाल से मिलने के बाद कमलेश्वर की धारणा बदल गई। उन्होंने लिखा है –

"गुरुकुलों में पढ़े और दीक्षा प्राप्त स्नातकों को जब भी मैं देखता था तो अजीब सी अनुभूति होती थी। ... खास तौर से उन्हें देखकर जो पहनावे और आचार–व्यवहार में तो पश्चिमी साहब बन गये थे, पर दिमागी रूप में वहीं के वहीं टिके हुए थे। गुरुकुल में ऐसे स्नातकों के आस–पास पसीने और इत्र की मिली–जुली–सी गंध आती है ... चाहे वह मूल्यों के संबंध में हो या मान्यताओं के। यशपाल गुरुकुल में पढे हैं। यह जानकर उनके प्रति भी कहीं न कहीं मेरे मन में, कुछ उलझन सी हुई थी क्योंकि सूट पहने हुए आदमी की बांह में अगर लाल सूत में बंधा ताबीज निकल आये तो मन गिजगिजाहट से भर जाता हैं यशपाल को इसलिए शुरू–शरू में मैं बहुत खुलकर नहीं जानना चाहता था। उनकी बांह में ताबीज न भी होता, पर बनियाइन के नीचे जनेऊ भी निकल आता तो मुझे बेहद तकलीफ होती। रचनाओं से ऐसा नहीं लगता था ... पर यशपाल से मिलने पर और बातचीत के दौरान यह लगा कि वे ऊपर से जितने आधुनिक हैं उससे भी

ज्यादा भीतर से हैं ... अधिकांश को निकट से जानना बड़ा सुखदायी होता है पर शायद यशपाल के संबंध में बात उलटी है।"[7]

'सिंहावलोकन' एक महत्त्वपूर्ण आत्मकथा है। इसमें वर्तमान बोध के आधार पर घटना प्रसंगों में अपनी कलात्मक प्रतिभा के बल पर कार्य कारण भाव संबंध स्थापित कर लेखक अपने व्यक्तित्व के विकास को दर्शाता है। अतएव यशपाल पहले आर्यसमाज से जुड़े। उसके बाद उन्होंने स्वदेशी आन्दोलन में भाग लिया, विदेशी कपड़ों की होली जलाई, गांव में घूमकर ग्रामीणों के अन्दर राजनीतिक चेतना जगाने के लिए भाषण दिया, बाद में संतुष्टि न मिलने के कारण सशस्त्र क्रांति में कूद पड़े। सशस्त्र क्रांति के दौरान वे जेल गये और लगभग छः वर्षों तक जेल में रहे। वहाँ उन्होंने कई भाषाओं का अध्ययन किया। जेल से छूटने के बाद साहित्यकार का जीवन शुरू हुआ।

यशपाल का क्रांतिकारी जीवन पहले है और साहित्यकार जीवन बाद में। साहित्यकार के रूप में इनकी सफलता का श्रेय इनका क्रांतिकारी जीवन है। इसीलिए इनकी लेखनी में वास्तविकता देखने को मिलती है। साहित्यिक जीवन आरम्भ करने के बाद भी यशपाल कई व्यक्तियों की दृष्टि में क्रांतिकारी बने रहे। इन्होंने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत कहानियों से की। महादेवी वर्मा ने यशपाल की षष्टिपूर्ति के अवसर पर आयोजित इलाहाबाद की एक गोष्ठी में कहा था –

"जब यशपाल की पीढ़ी के साहित्यकार सरस्वती साधना में लगे हुए थे तब यशपाल किसी बन्द कमरे में बैठे बम बना रहे थे और जब कई वर्ष बाद यशपाल सरस्वती के मन्दिर में पहंचे तो सरस्वती का ध्यान सर्वाधिक यशपाल पर हो गया।"[8]

यशपाल की लेखनी ने जब से चलना आरम्भ किया तब से जीवन के अन्त तक निर्बाध गति से चलती रही। जीवन के अनुभूत तथ्यों, निराशा, सफलता तथा असफलता ने उनकी जीवन दृष्टि को जिस रूप में ढाला है उसी का प्रतिफलित रूप उनके साहित्य में उपलब्ध है। यशपाल के क्रांतिकारी तथा साहित्यिक व्यक्तित्व का अविभाज्य संबंध है। उन्होंने अपनी षष्टिपूर्ति में स्वयं कहा है –

"मैं साहित्य को साधना के रूप में मानता हूँ। मेरा ध्येय साहित्य द्वारा क्रांति की प्रवृत्ति और भूमिका तैयार करना ही रहता है।"[9]

यशपाल ने अपने सशस्त्र क्रांतिकारी व्यक्तित्व का परिचय अपनी आत्मकथा में दिया है। 'सिंहावलोकन' ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक प्रामाणिक माना जा सकता है। यशपाल ने अपनी बातों में प्रामाणिकता लाने के लिए कई उद्धरणों का सहारा लिया है; जैसे – जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथा का, सुभाषचन्द्र बोष की आत्मकथा का आदि। वैसे तो 'सिंहावलोकन' में आत्मकथा के सभी तत्व दिखाई देते हैं जो इसे आत्मकथा सिद्ध करती हैं। पर कुछ जगहों पर आत्मप्रशंसा का भाव उभर कर आ गया है। यह भाव सुखदेव के चित्रण में देखा जा सकता है। इसी प्रकार

कुछ जगहों पर निष्पक्षता का अभाव भी मिलता है। इस प्रकार सिंहावलोकन में कुछ कमियां मौजूद हैं फिर भी एक श्रेष्ठ आत्मकथा है तथा यशपाल एक श्रेष्ठ आत्मकथा लेखक हैं।

संदर्भ

1. यथार्थवाद के संबंध में मेरे कुछ विचार – यशपाल, कल्पना – सं. आर्येन्द्र शर्मा, पृ. 62
2. यशपाल : उपन्यास विकास – रेखा का धरातल – श्री बालमुकुन्द मिश्र, साहित्य संदेश – सं. महेन्द्र, पृ. 73
3. यशपाल की 'मेरी तेरी उसकी बात' – विवेकी राय, कल्पना – सं. आर्येन्द्र शर्मा, पृ. 13
4. यशपाल का कथा साहित्य – प्रकाशचन्द मिश्र, पृ. 2
5. यशपाल के पत्र – मधुरेश (सम्पादक), पृ. 20
6. सिंहावलोकन (प्रथम भाग) – यशपाल, पृ. 43–44
7. अपनी निगाह में – कमलेश्वर, पृ. 75
8. यशपाल का उपन्यास साहित्य – सरोज बजाज, पृ. 38
9. वही

संदर्भ ग्रंथ सूची

(क) आधार सामग्री

1. यशपाल – सिंहावलोकन (प्रथम भाग), लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण – सातवां 1994
2. यशपाल – सिंहावलोकन (द्वितीय भाग), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण – छठा 1994
3. यशपाल – सिंहावलोकन (तृतीय भाग), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण छठा, 1994

(ख) सहायक सामग्री

1. सं. अजीत कुमार – बच्चन रचनावली (भाग–7), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–प्रथम, 1983
2. अमृता प्रीतम – रसीदी टिकट, हिन्द पाकेट बुक्स दिल्ली, संस्करण – चतुर्थ, 1990
3. 'उग्र', बेचन शर्मा – अपनी खबर, राजकमल पेपरबैक्स, संस्करण – पहला, 1984
4. उपाध्याय, डॉ. कमलापति – हिन्दी आत्मकथा–साहित्य का शैलीगत अध्ययन, साहित्यरत्नालय कानपुर, संस्करण – प्रथम, 1992
5. कमलेश्वर – अपनी निगाह में, किताब घर नई दिल्ली, संस्करण – प्रथम 1993
6. चतुर्वेदी, रामस्वरूप – हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण – पंद्रहवां, 2001
7. चमन लाल – यशपाल के उपन्यास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण – प्रथम, 2002
8. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र – हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण – चतुर्थ, 2004
9. दिनकर, रामधारी सिंह – दिनकर की डायरी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, संस्करण – प्रथम, 1987
10. सं. डॉ. नगेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, संस्करण – 26वां, 1999
11. डॉ. नगेन्द्र – आस्था के चरण

12. बजाज सरोज – यशपाल का उपन्यास साहित्य, ऋषभचरण जैन एवं संतति, नई दिल्ली, सं–प्रथम, 1979

13. भाटिया, कैलाशचन्द्र – हिन्दी साहित्य की नवीन विधाएं, युनाइटिड बुक हाउस, सं–प्रथम, 1979

14. भाटिया, कैलाशचन्द्र, भाटिया रचना – साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएं, तक्षशीला प्रकाशन, सं–प्रथम, 1996

15. मधुरेश – यशपाल रचनात्मक पुनर्वास की एक कोशिश, अधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), सं 2006

16. सं. मधुरेश – क्रांतिकारी यशपाल एक समर्पित व्यक्तित्व, लोकभारती प्रकाशन, सं–प्रथम, 1979

17. सं. मधुरेश – यशपाल का रचना संचयन, साहित्य अकादेमी, सं–प्रथम, 2006 पुर्नमुद्रण 2007

18. सं. मधुरेश – यशपाल के पत्र, दि मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया लिमिटेड, सं–प्रथम, 1977

19. मिश्र प्रकाशचन्द्र – यशपाल का कथासाहिय, मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया लिमिटेड, सं–प्रथम, 1978

20. राजपाल, डॉ. हुकुमचन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, विकास पब्लिशिंग हाउस, सं–प्रथम, 1997

21. लवटे, डॉ. सुनील कुमार – यशपाल एक समग्र मूल्यांकन, पराग प्रकाशन दिल्ली, सं–प्रथम, 1984

22. वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र (सम्पादक) – हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी, सं 2000

23. वाजपेयी, नन्ददुलारे – हिन्दी साहित्य : बीसवी शताब्दी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सं 1970

24. शर्मा, डॉ. गोपाल कृष्ण – यशपाल ाक उपन्यास साहित्य, नवचेतन प्रकाशन, दिल्ली, सं 2004

25. शर्मा, डॉ. नारायण विष्णुदत्त – हिन्दी आत्मकथा, पुस्तक संस्थान कानपुर, सं–प्रथम, 1978

26. शर्मा, डॉ. हरिवंशलाल (सम्पादक) – हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास, (चुतर्दश भाग : अद्यतन काल), नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी

27. शुक्ल, रामचन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी, सं – सम्वत् 2058

28. स्नातक, विजयेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, साहित्य अकादेमी प्रकशन, सं–प्रथम, 1996

29. सिंह, कुंवरपाल (सम्पादक) – यशपाल : पुनर्मूल्यांकन, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2004

30. सिंह, चन्द्रावती – हिन्दी साहित्य में जीवन चरित का विकास, सं– 1958

31. सिंह, नामवर – छायावाद, राजकमल प्रकाशन, सं– 2000

32. सिंहल, डॉ. बैजनाथ – हिन्दी विधाएं : स्वरूपात्मक अध्ययन, हरियाणा साहित्य अकादेमी चण्डीगढ, सं. प्रथम, 1986

33. सोनवणे, डॉ. चन्द्रभानु सीताराम – हिन्दी गद्य साहित्य, ग्रन्थन प्रकाशन, सं–प्रथम, 1975

34. डॉ. हरिमोहन – साहित्यिक विधाएं : पुनर्विचार, वाणी प्रकाशन, सं–प्रथम 1997

35. Encyclopeadia of Britainica, val. IInd

36. Encyclopeadia of america, val. IInd

(ग) सहायक पत्र–पत्रिकाएं

1. सं. कमलेश्वर –सारिका, 16 दिसम्बर 1948 (यशपाल स्मृति खण्ड)

2. सं. त्यागी भीमसेन – भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक 2004) अक्टूबर 2003

3. सं. भारती, धर्मवीर – धर्मयुग, 16 जनवरी 1977

4. सं. महेन्द्र – साहित्य–संदेश, जुलाई–अगस्त 1956, भाग–18

5. यादव, राजेन्द्र – हंस, अंक मई, 1994

6. शर्मा, आर्येन्द्र – कल्पना, जनवरी 1958, अंक–1

7. शर्मा, आर्येन्द्र – नवम्बर 1975, अंक–11

परिशिष्ट

1911 – आठ वर्ष के यशपाल प्रेमदेवी माता और भाई धर्मपाल के साथ

1942 – 'विप्लव' के संपादक के रूप में

1953 – लंदन में एक शाम

1973 – नाती सिद्धार्थ के साथ अमेरिका में

1930 – वायसराय लार्ड इरविन की गाड़ी के नीचे बम विस्फोट करने से पहले

1938 – जेल से मुक्त होने के बाद – अब क्या करना है ?

1938 – नये जीवन की शुरुआत – जेल से मुक्त होने के बाद श्रीमती प्रकाशवती के साथ

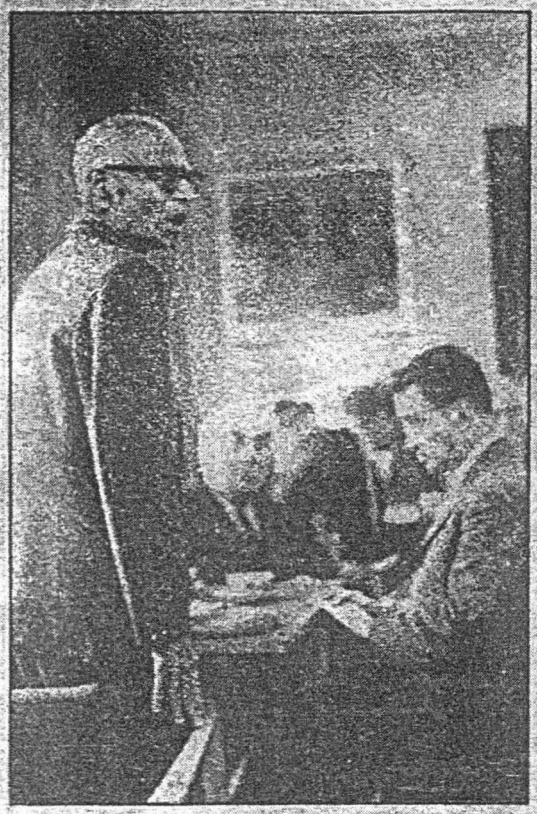

1958 – ताशकंद लेखक सम्मेलन में

1972 – आगरा विश्वविद्यालय से मानद डाक्ट्रेट

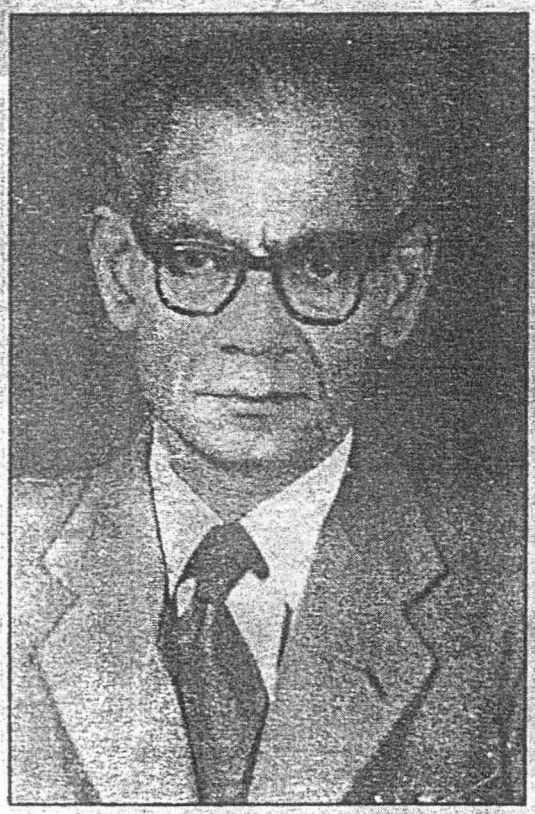

1953 – अभी तो बहुत कुछ करना है...

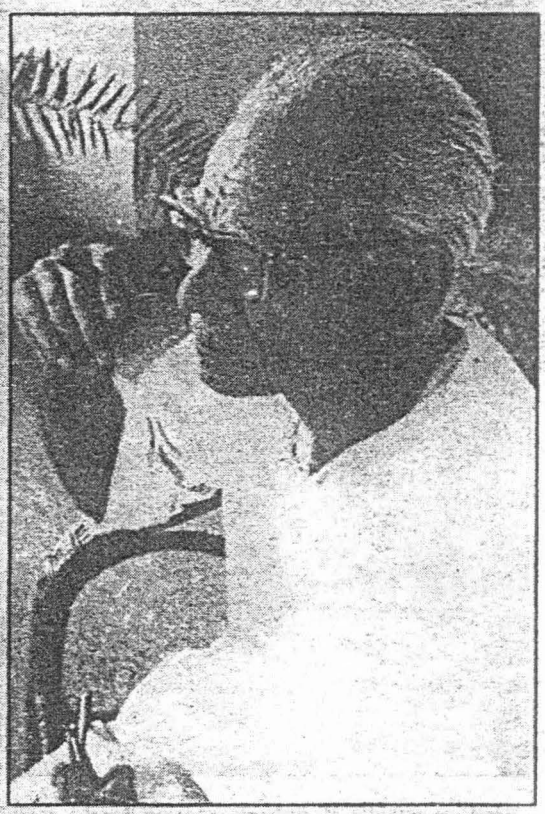

1963 – कितना किया – कितना और करना है ?

1963 - पूरे हुए साठ बरस। इलाहाबाद में षष्ठीपूर्ति समारोह में महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, इलाचंद्र जोशी आदि के साथ

1958 - ताशकंद लेखक सम्मेलन में- (बायें से) पहले मशहूर शायर हफीज जालंधरी और दूसरे फैज अहमद फैज के साथ

भूमिगत क्रांतिकारियों को गिरफ्तारी के लिए अंग्रेजी सरकार के इनाम का इश्तहार – यशपाल (सबसे ऊपर) इनाम 3000 रुपये और सबसे नीचे प्रकाशवती (प्रकाशो देवी) इनाम 500 रुपए

यशपाल का पत्र अपनी माताजी और छोटे भाई धर्मजी के नाम

(यह पत्र उन्होंने फतेहगढ़ जेल से मई 1934 में लिखा)

फतेहगढ़ जेल
(सेन्ट्रल)
मई १८-३४

पूज्य माता जी अनेक अनेक प्रणाम

आपका आशीर्वाद मय प्रेम पत्र मिला और पढ़ कर मन को बहुत संतोष हुआ। मुझे यहां सब से अधिक आनन्द इस बात से होगा कि आपका स्वास्थ्य अच्छा रहे। आपको सीही-बाई की दरद होता है। मैंने कुछ दिन हुए फ्रेंच भाषा की एक पत्रिका में पढ़ा था कि सीही-बाई का सबसे नया इलाज फ्रांस के डाक्टरों ने यह मालूम किया है कि दर्द की जगह शहद की सूई (इंजेक्शन) लगवाया जाय। दूसरा इलाज यह भी है कि शहद की मक्खी से कटवा या जाता है परन्तु यह देख लेना चाहिये कि मक्खी जहरीली न हो। यहां गरमी आज कल तबाही की पड़ रही है। लू से बचने के लिये जंगलों पर खस के मोटे परदे लटका देते हैं और उन पर कई दफे भिगोये जाने पर भी वह कुछ ही मिनटों में सूख जाते हैं। स्वयं

हाथों से लगाई फुलवाड़ी की दशा भी बहुत ही खराब हो गई है परन्तु अभी जेठ में तो पानी गिरने की आशा भी नहीं है परन्तु सुनते हैं यहां आषाढ़ में पानी पड़ जाता है। यदि पानी पड़ जाय तभी कल्याण है। आप मेरे स्वास्थ्य के विषय में किसी भी प्रकार की चिन्ता न करें जो कुछ भी है गर्मी की वजह से ही है। इधर प्रायः पन्द्रह दिन मैंने कुछ भी नहीं पढ़ा पर अब थोड़ा थोड़ा पढ़ने लगा हूं फ्रेंच भाषा की एक कविता की पुस्तक से कुछ समय निकल जाता है। आजकल मैं इटेलियन भी पढ़ने लगा हूं, धीरे धीरे पढ़ लेता हूं। इस प्रान्त बंगाल की पुस्तकें तो कोई नहीं मिली। इटेली वालों को मेरी ओर से याद करना। कीर सोमो भी साईकल चलाते हैं और उसे कहिये और पीलिये तथा मिठाई लेवी। कभी मामी को भी नमस्ते कहना। आपने वह लोरी की बात लिखी है, इससे मुझे फ्रेंच भाषा की एक लोरी की याद आई जो भी बिलकुल ऐसी है। वह आपको लिखूं? परन्तु आपको सिखाने में भी नहीं। अच्छा माता जी मुझे ऐसे ही पत्र लिखते रहना नहीं तो रूठ जाऊंगा, जैसे रूठता था।

भाई धर्मी को तो। लम्बे लोगों के पत्र लिखने में कष्ट होता है इसलिये अधिक लिख कर पढ़ने की उलझन डाल कर बढ़ाना नहीं चाहता। भाई धर्मी तुम देव लोगों की बीमारी में लगा हो गई आज तुम्हें कुछ सुविधा होगी उस पास तो सब लोग होंगी चाहेंगे। परिणाम से सदा संतोष कर लिया करना। इधर मैंने कुछ दिनों से कागज के विषय में कुछ सोचा है। जो यदि कोई मिलने आया तो इसे कह दूंगा। किरना भैया पत्र मुझे मिला था उसका उत्तर भी भाई दे दिया था। यह देख मुझे प्रसन्नता होती है कि तुम इस विषय पर पुख्ता हो। कितनी ही बार मैंने तुम्हें पत्रों को दोहरा दोहरा कर पूछा है परन्तु तुमने उत्तर नहीं दिया तो नहीं दिया। शायद तुम तक वह पहुंचे ही नहीं। Mr. Nehru को तुमने मेरे पत्र की प्रति भेज दी थी क्या? और तो समाचार कोई है नहीं। कुछ दिन से मुझे feverish मालूम होता था इसलिये १० तारीख से temperature लेना शुरु किया है ज्यादा तीसरे पहर ९९° होता है।

[redacted] भी कोई बात नहीं है केवल गर्मी ही [redacted] है। यह खबर माताजी के लिये नहीं है। [redacted] पानी गिरने पर ठीक हो जायेगा। [redacted] से तुम सब को सदा ... [redacted]।

[illegible]

यशपाल का पत्र श्रीमती प्रकाशवती पाल के नाम

अपनी पत्नी श्रीमती प्रकाशवती पाल के नाम यह पत्र (पोस्टकार्ड) यशपाल जी ने नवम्बर 1937 में लिखा जब वह नैनी जेल में थे।

परमप्रिय पाश एन.सी.पी. 17.1.37

तुम्हारे पिछले पत्र से मुझे पता चला कि तुम दिसम्बर के पहले सप्ताह में मुझसे मिलने के लिए आने का विचार कर रही हो। इस बारे में अपनी राय, मैं इसी महीने के पत्र में पहले ही लिख चुका हूं और फैसला तुम पर छोड़ता हूं। यदि तुम आने का ही निर्णय करती हो तो, अपने आने की तारीख और समय जेल-अधिकारियों को सूचित कर देना, यह बहुत जरूरी है। यह तुम तार द्वारा भी कर सकती हो। सिंह ने तुम्हें कानपुर में 'ब्रेक जर्नी' के लिए लिखा है। मेरी पाण्डुलिपियों के सिलसिले में तुम्हारा इरादा भी 'प्रताप' के लोगों से मिलने का है। लेकिन, यदि तुम गौर करो तो, इस बारे में मेरा मशविरा है कि कानपुर में 'जर्नी ब्रेक' मत करो। जो भी जरूरी हो पत्राचार द्वारा करो। कानपुर यात्रा से कोई लाभ नहीं है। परेशान होने से कोई फायदा नहीं। तुम शायद दिल्ली के रास्ते होकर आओ। अगर तुम छोटे मार्ग से आओ, जो कि सहारनपुर-बरेली-लखनऊ होकर है; तो लखनऊ में 'ब्रेक जर्नी' कर लेना और श्री लाल बहादुर शास्त्री एम.एल.ए. से मिलने का प्रयत्न करना। श्रीयुत आचार्य से तुमको उनका पता मिल सकता है। इलाहाबाद में उनका पता है—:3, डैम रोड, इलाहाबाद। जैसे ही तुम्हें यह पोस्टकार्ड मिले, (तुम) शास्त्री जी को लिखकर पूछ लेना कि तुम इधर आते समय उनसे कहां मिल सकती हो। तुमने लिखा है कि इसी फेरे में, एक सप्ताह लाहौर बिताने का इरादा कर रही हो। आशा है, तुम मां से मिलकर उन्हें सान्त्वना दोगी। उनके पत्र से लगता है वे (जेल से) रिहाई को लेकर निराश हैं। तुम्हें दूसरे सप्ताह में इलाहाबाद आना शायद आसान होगा। उस सूरत में मुझे निश्चित सूचना देना। मैं बिल्कुल ठीक हूं और तुम भी स्वस्थ होगी।

तुम्हारा तार का पता क्या है? ह. यशपाल

17.1.37

श्रीमती प्रकाशवती पाल
रेवाचन्द फतहचन्द बिल्डिंग्स
थियोसोफीकल सोसाइटी के पास, बन्दर रोड, करांची